कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 54 अंक : 1 नवम्बर 2007 मूल्य : 10 रुपये

उज्ज्वल भविष्य की तलाश

गांधीजी के आदर्शों को संयुक्त राष्ट्र का सम्मान

2 अक्तूबर अब अंतरराष्ट्रीय अहिंसा दिवस

आइये, हम राष्ट्रपिता के आदर्शों का अनुसरण करने की प्रतिबद्धता दोहराएं

सपनों का मेरा भारत

मैं ऐसे भारत के निर्माण के लिए कार्य करूंगा जिसमें निर्धनतम तबके को भी यह महसूस हो कि यह उसका अपना देश है, जिसके निर्माण में उनकी राय भी मायने रखती हो, एक ऐसा भारत जिसमें न कोई उच्च वर्ग हो और न कोई निम्न वर्ग; ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय सौहार्द के साथ बसते हों। इस भारत में छुआछुत जैसे अभिशाप व मद्यपान और मादक द्रव्य जैसे जहर के लिए कोई जगह नहीं होगी। स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार मिलेंगे। दूसरे देशों के साथ हमारे अच्छे संबंध होंगे। ऐसा होगा मेरे सपनों का भारत।

- मोहनदास करमचंद गांधी

सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

davp22202/13/0037/0708

KH-11/07/04

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 54 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48

कार्तिक–अग्रहायण 1929, नवम्बर 2007

प्रभारी सम्पादक

कैलाश चन्द मीना

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक, **कुरुक्षेत्र**

कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,

गेट नं. 5, निर्माण भवन

ग्रामीण विकास मंत्रालय

नई दिल्ली–110011

दूरभाष : 23061014, 23061952

फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास

वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक

जगदीश प्रसाद

दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण एवं सज्जा

संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति : 10 रुपये

वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

द्विवार्षिक : 180 रुपये

त्रिवार्षिक : 250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में : 530 रुपये (वार्षिक)

अन्य देशों में : 730 रुपये (वार्षिक)

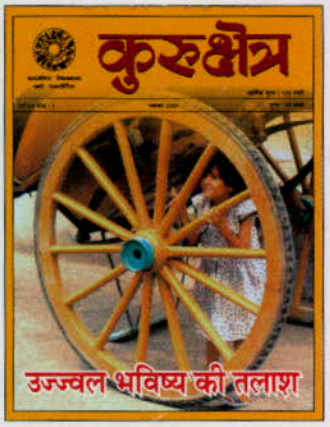

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

★ ग्रामीण बच्चों के लिए कल्याणकारी योजनाएं — डॉ. उमेश चन्द्र अग्रवाल — 4

★ ग्रामीण बाल श्रमिकों का बढ़ता शोषण — वीरेन्द्र कुमार — 10

★ बाल श्रम : एक कलंक — संदीप कुमार — 14

★ बाल श्रमिक एक सामाजिक अभिशाप — मनीष कुमार श्रीवास्तव — 16

★ बाल श्रम : समस्या, कारण एवं दुष्प्रभाव — प्रोफेसर के.एम.मोदी — 22

★ बालश्रम उन्मूलन हेतु सरकारी एवं गैर–सरकारी प्रयास — डॉ. सुशील कुमार गौतम — 25

★ ग्रामीण बच्चों की वास्तविक स्थिति — सत्येंद्र कुमार श्रीवास्तव — 30

★ संकट में बचपन — हिमांशु शेखर — 34

★ कृषि विविधिकरण : आवश्यकता एवं लाभ — डॉ. वाई. एस. शिवे एवं हर नारायण मीना — 37

★ ग्रामीण भारत की आधारभूत संरचना — डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी — 40

★ कितना उपयोगी है ऊंटनी का दूध — डॉ. डी.डी. ओझा — 44

★ ग्रामीण भारत में बाल श्रम : दशा एवं दिशा — डॉ. भंवर लाल हर्ष — 46

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

यह सच है कि देश का भविष्य बच्चों में निहित है। बच्चे ही देश के भावी कर्णधार हैं। हर मां–बाप का यह सपना होता है कि वे अपनी संतान को अच्छे संस्कार दें और बदलते समय के अनुसार बच्चों को पढ़ा लिखाकर इस योग्य बनाएं कि वे परिवार तथा देश के लिए बेहतर काम कर सकें। परंतु बहुत से बच्चे इस सौभाग्य से वंचित रह जाते हैं तथा मां–बाप गरीबी और मजबूरी के कारण चाहकर भी अपने बच्चों के लिए कुछ नहीं कर पाते।

ऐसे बच्चे निर्धनता व दरिद्रता के कारण छोटी उम्र में ही मजदूरी में लग जाते हैं और परिवार की 30 से 40 प्रतिशत आय का स्रोत बन जाते हैं। बाल श्रमिकों में 60 प्रतिशत बच्चे ग्रामीण क्षेत्रों से हैं जिनकी आयु 10 वर्ष से कम है। इनमें से 23 प्रतिशत बच्चे औद्योगिक श्रम में तथा 37 प्रतिशत बच्चे घरेलू कार्यों में कार्यरत हैं। विश्व के 25 करोड़ बाल श्रमिकों में से लगभग 10 करोड़ भारत में हैं।

वैसे तो गरीबी और बाल श्रम का चोली दामन का संबंध रहा है किंतु वैश्वीकरण और औद्योगिक प्रतिस्पर्धा ने इस प्रवृत्ति को तेजी से आगे बढ़ाया है जिससे विकसित और विकासशील देश बढ़ी संख्या में इसकी चपेट में आ रहे हैं। खतरनाक उद्योगों व लाभकारी उपक्रमों में बच्चों को काम आसानी से मिल जाता है क्योंकि बड़ों की अपेक्षा बच्चों को कम मजदूरी देनी पड़ती है तथा बच्चों की कोमल उंगलियां कसीदाकारी व लचीला शरीर खदानों के लिए उपयुक्त होता है। अतः उद्योगपति अपनी महत्वाकांक्षाओं के लिए छोटे–छोटे बच्चों को मजदूरी के लिए मजबूर कर देते हैं । इन उद्योगों में बाल श्रमिकों का बड़े पैमाने पर शारीरिक व मानसिक शोषण किया जाता है। शोचनीय स्थितियों व बुरे व्यवहार के कारण ये बच्चे बड़े होकर नशे की लत का शिकार हो जाते हैं । कुछ आतंकवादी प्रवृत्तियों व असामाजिक तत्वों के चंगुल में फंस जाते हैं।

सरकार ने बाल श्रम को रोकने के लिए कई कानून बनाए हैं। बच्चों की मुफ्त शिक्षा व भोजन तथा बच्चों के स्वास्थ्य व पोषण को सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा उठाए गए कदम सराहनीय हैं। परंतु बाल श्रम का समाधान केवल सरकारी प्रयास नहीं हो सकते। देश के हर नागरिक को बच्चों की खुशहाली के लिए प्रयास करना होगा तभी हम कल के समृद्धशाली भारत का निर्माण कर सकते हैं।

प्रस्तुत अंक में बाल श्रमिकों से संबंधित समस्याओं व सुझावों तथा बाल श्रमिकों के कल्याण के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं व प्रयासों की जानकारी दी गई है। इसके अतिरिक्त कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इसमें शामिल किए गए हैं। आपके सुझावों व प्रतिक्रियाओं का हमें इंतजार रहेगा ।

मत सम्मत

शिक्षा पर केंद्रित कुरुक्षेत्र का सितम्बर अंक पढ़ा। शिक्षा मनुष्य को अन्य जीवों से श्रेष्ठ बनाती है। शिक्षा शोषण से मुक्ति दिलाती है। शिक्षा अज्ञानता के अंधकार को मिटाकर ज्ञान के दीये जलाती है। लेखक प्रांजल धर का लेख भारत में शिक्षा की स्थिति का यथार्थ विश्लेषण प्रस्तुत करता है। खैर, संपादकीय में आपने बिल्कुल सही कहा है कि सबसे पहले अपने आपसे पूछो आपने देश और समाज के लिए क्या किया है और क्या करने जा रहे हैं? उत्तर खुद व खुद मिल जाऐगा। आलोचना के लिए तो सारी जिंदगी पड़ी है।

चक्रपणि, खगड़िया, बिहार

ग्रामीण विकास को समर्पित और शिक्षा से सम्बंधित कुरुक्षेत्र सितम्बर 2007 का रोचक अंक पढ़ा। इस अंक की शब्दों में व्याख्या करना दुष्कर है। पत्रिका में शिक्षा के विभिन्न पहलुओं को समेटने का प्रयास किया गया है खासकर के प्राथमिक शिक्षा। मयंक श्रीवास्तव ने जिस तरह अपने लेख को सुव्यवस्थित किया है वह प्रशंसनीय है। इस लेख में विभिन्न कार्यक्रमों और नई शिक्षा नीति का समागम, पत्रिका की शोभा को बढ़ा देता है। ऋतु सारस्वत और प्रांजल धर जी के लेख तो आंखें खोल देने वाले हैं। कुरुक्षेत्र का यह अंक हम प्रतियोगी छात्रों के लिए काफी ज्ञानवर्धक और पठनीयता की दृष्टि से उत्कृष्ट है।

अमरेन्द्र मिश्रा, सुल्तानपुर (उ.प्र.)

कुरुक्षेत्र का सितम्बर 2007 का अंक पढ़ा। बेहद ज्ञानवर्द्धक एवं रोचक लगा। शिक्षा पर आधारित संपादकीय लाजवाब रहा। प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित सभी लेख ज्ञानवर्द्धक थे। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हमारे देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका समाज के लगभग हर वर्ग के लिए समान उपयोगी है। जैसे प्रतियोगी छात्र, मुखिया, सरंपच, या अन्य जन प्रतिनिधि इस पत्रिका से जानकारी प्राप्त कर आम ग्रामीण जनता तक पहुंचाकर उसे जागरुक किया जा सकता है। यह सचमुच जनमानस की पत्रिका है। ग्रामीण विकास की इस पत्रिका को हर श्रेणी में चाहे वह सम्पादन है या पेज कवर, ज्ञानवर्द्धक लेख, पेपर की क्वालिटी हो या शुद्ध छपाई, सभी क्षेत्रों में इस पत्रिका की जितनी भी प्रशंसा की जाए कम होगी।

मो. खालिद रेज़ा, अररिया, बिहार

मैं इग्नू से ग्रामीण विकास में स्नातकोत्तर कर रहा हूं तथा कुरुक्षेत्र का मैं तीन वर्षों से नियमित पाठक रहा हूं। मैंने सितम्बर 2007 के अंक का गहन अध्ययन किया। शिक्षा पर केन्द्र–बिन्दु रखकर जो विश्लेषण किया है, वह बहुत ही सराहनीय है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए शिक्षा में सुधार चुनौती के रूप में शामिल है। प्रत्येक नागरिक को सरकार की योजनाओं के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की जरूरत है, तभी शिक्षा की स्थिति में सुधार किया जा सकेगा। शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए आधार स्तर पर लोगों को जोड़ने के लिए विश्व का सबसे बड़ा कार्यक्रम 'मिड–डे मील कार्यक्रम' अभी चलाया जा रहा है। इसका लाभ 12 करोड़ बच्चों को मिल रहा है। जरूरत है सभी लोगों की भागीदारी की।

अजय कुमार शर्मा, गिरिड़ीह, झारखण्ड

ग्रामीण विकास मंत्रालय की इस अनमोल पत्रिका कुरुक्षेत्र सितम्बर 2007 का शिक्षा पर केन्द्रित अंक पढ़ा और इसे पढ़ने के बाद कुछ कर गुजरने को मन चाहता है। पत्रिका के लेख इतने उत्साहवर्धक है कि अन्तरात्मा जाग जाती है। मयंक जी का लेख प्राथमिक शिक्षा बढ़ता प्रयास घटता स्तर तो अतुलनीय है। इस लेख में लगे फोटो भी उत्कृष्ट कोटि के हैं। बैजनाथ पाण्डेय ने प्राथामिक शिक्षा में जिस तरह मिड–डे मील कार्यक्रम की भूमिका को बताया है वह प्रशंसनीय है। साथ–साथ अनीता मोदी का रोजगार गारन्टी पर लेख दिल दहला देने वाला है। पत्रिका में नीम के गुणों और महत्व पर जिस तरह से चर्चा की गई है वह हमारे जीवन के लिए अति उपयोगी है। पत्रिका में सम्पादकीय लिखने के लिए और इतना ज्ञानवर्धक अंक निकालने के लिए सम्पादक मंडल को धन्यवाद।

शैलेन्द्र श्रीवास्तव, गोविन्दपुर, इलाहाबाद

मैं आपकी इस पत्रिका का चार साल पुराना पाठक हूं। विकास से जुड़ी यह पत्रिका मुझे इसलिए भी भाती है कि यह समस्याओं के ज्वार में दबी पत्रकारिता के बीच समाधान का सुकून ले कर आती है। शिक्षा विशेषकर प्राथमिक शिक्षा पर केंद्रित इस अंक को देखते ही सोचा आखिर इसमें पिछले अंकों से अलग क्या होगा? परंतु तुरन्त समझ में आ गया कि इसके कुछ लेख ऐसे हैं जो अपने कुछ पृष्ठों में ही अपने विषय से जुड़ी सारी बातों को समेट सकने में सफल हुए हैं। अंक के लेखों में प्राथमिक शिक्षा बुनियादी आवश्यकता' और 'नीम का कृषि, पर्यावरण एवं हमारे जीवन में महत्व' भी खूब पसंद आए।

चन्दन शर्मा, भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली

कुरुक्षेत्र पत्रिका का विगत दो वर्षों से नियमित पाठक हूं व अब सदस्य भी बन गया हूं। सितम्बर 07 का अंक शिक्षा को लेकर था और आज प्रत्येक भारतीय चाहता है कि उनका देश शत प्रतिशत साक्षर हो, भारत इस दिशा में आगे बढ़ता जा रहा है, पर जब तक महिला साक्षरता में वृद्धि नहीं की जा सकती तब तक यह लक्ष्य पूर्ण नहीं हो सकता, कमोवेश भारत में आज भी शिक्षा के जितने अवसर लड़कों को मिलते हैं लड़कियों को नहीं मिल पाते जबकि उनका परिणाम हमेशा लड़कों से आगे रहता है। शिक्षा का समान अवसर दोनों को देना जरूरी है तभी हमारा साक्षरता का प्रतिशत शतप्रतिशत बन पायेगा।

पूरन चन्द्र पाण्डे, नैनीताल, उत्तराखण्ड

शिक्षा पर केंद्रित कुरुक्षेत्र का सितम्बर अंक पढ़ा। 'आओ स्कूल चलें हम' जैसे सुंदर शीर्षक को समेटता यह अंक बहुत जानकारीपरक और विश्लेषणयुक्त है। संपादकीय बहुत कम शब्दों में बहुत ही महत्वपूर्ण विषयों को उठाता है। शिक्षा का मूल अधिकार अभी भी देखभाल की मांग करता है। प्रांजल धर का लेख 'शिक्षा की भूमिका और हमारा देश' पूरी समस्या को हमारे सामने रखता है, वे वर्तमान समय, समाज और परिवेश के सबसे ज्वलन्त प्रश्न हैं।

सरला सरोज, सतना, (म.प्र.)

ग्रामीण बच्चों के लिए कल्याणकारी योजनाएं

डॉ. उमेश चन्द्र अग्रवाल

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने एक बार कहा था कि "मैं देश के हर बच्चे की आंख में आने वाले हिन्दुस्तान की तस्वीर देखता हूं।" पं. नेहरू की यह पंक्तियां आज भी उतना ही महत्व रखती हैं जो उस समय रखती थीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से देश के सभी बच्चों के सर्वांगीण विकास को लक्ष्य बनाकर नेहरू जी के उन सपनों को साकार करने की दिशा में सरकार के अतिरिक्त अनेक स्वयंसेवी संगठनों, औद्योगिक घरानों, धार्मिक संगठनों तथा वैयक्तिक स्तरों से भी अनेक प्रयास किए जाते रहे हैं। इन प्रयासों के अनेकों सकारात्मक परिवर्तन भी दिखाई दिए हैं लेकिन किए गए विभिन्न प्रयासों की कसौटी पर प्राप्त परिणाम समानान्तर दृष्टिगोचर नहीं हुए हैं। ये नकारात्मकता नहीं अपितु नग्न यथार्थ है जिसे चाहकर भी नकारना सच्चाई से मुंह चुराना ही कहा जाएगा। लक्ष्यों के समकक्ष सार्थक परिणाम प्राप्त करने हेतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आज तक इस दिशा में चलाई गई दर्जनों योजनाओं और कार्यक्रमों के निर्धारण व उनके क्रियान्वयन के बीच समुचित समन्वय न हो पाना ही इसका सर्वप्रमुख कारण प्रतीत होता है। आज अर्थव्यवस्था के मामले में विश्व स्तर पर तीसरे पायदान पर खड़े होने के बावजूद यह दशा भारत के लिए काफी निराशाजनक है। तभी अभी तक यहां पर बच्चों को उनके निर्धारित अधिकार तो दूर सामान्य तौर पर जीवन जीने की आवश्यक सुविधाओं को भी मुहैया कराया जाना सम्भव नहीं हो पाया है। हालांकि देश में तेजी से बढ़ती जनसंख्या और उसमें भी बच्चों की विशाल संख्या ने सरकारी मुहिम को काफी हद तक प्रभावित किया है।

> उल्लेखनीय है कि आज हमारे देश में बच्चों की कुल संख्या करीब 43 करोड़ है जो जनसंख्या की दृष्टि से विश्व के अग्रणी देशों में जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका (30 करोड़), इण्डोनेशिया (25 करोड़), ब्राजील (19 करोड़), पाकिस्तान (17 करोड़), बांग्लादेश (15 करोड़), रूस (14 करोड़) की कुल जनसंख्या से भी अधिक है। इतनी बड़ी बाल जनसंख्या के लिए पालन–पोषण, चिकित्सा व स्वास्थ्य, शिक्षा और मनोरंजन के समुचित साधन मुहैया कराने जैसे सभी मौलिक अधिकारों को ससमय सुनिश्चित किया जाना एक बड़ी चुनौती है। जहां एक–चौथाई जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे जीवन–यापन करने को विवश हो और बेरोजगारी की दर 7–8 प्रतिशत के बीच चल रही हो और चाहते हुए भी युवा वर्ग को रोजगार के समुचित अवसर मुहैया नहीं कराए जा पा रहे हों।

वर्तमान में देश में बच्चों के कल्याण और विकास को समुचित दिशा और आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था हेतु 13 केन्द्रीय मन्त्रालय अपना योगदान करते हैं। इनमें मानव संसाधन विकास मन्त्रालय (महिला एवं बाल विकास विभाग), स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मन्त्रालय (परिवार कल्याण विभाग), श्रम मन्त्रालय (बाल श्रमिक सैल), सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मन्त्रालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके द्वारा विभिन्न नीतियों और कार्य योजनाओं जैसे – राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति– 2002,राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986, राष्ट्रीय बालश्रम नीति–1987, राष्ट्रीय बालनीति–1974, बाल विकास हेतु संप्रेषण रणनीति–1996, पोषण पर राष्ट्रीय कार्ययोजना–1995, राष्ट्रीय पोषण नीति–1993, राष्ट्रीय बाल चार्टर–2003, राष्ट्रीय बाल कार्ययोजना – 2005 आदि को तैयार कर उन्हें क्रियान्वित करने के प्रयास किए जाते रहे हैं। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग/राज्यों के मानवाधिकार आयोग तथा 30 हजार गैर सरकारी संस्थाएं भी बच्चों से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण खोजने एवं उनको क्रियान्वित कराने हेतु निरन्तर प्रयत्नशील हैं। देश में सभी बच्चों को बीमारियों से बचाकर उनके स्वास्थ्य की समुचित देखभाल करने व उन्हें भली–भांति विकसित और पल्लवित होने के लिए सर्वाधिक ध्यान गुणपरक एवं सृजनशील प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करने पर केन्द्रित किया जा रहा है। इस दिशा में 0–6 वर्ष आयुवर्ग के बच्चों को स्वास्थ्य, पोषण और प्रारम्भिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा बच्चों के कल्याणार्थ संचालित किए गए प्रमुख कार्यक्रमों और योजनाओं में समन्वित बाल विकास योजना–1975 एक ऐसा

विशाल और महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है जिसे पूरे देश में पिछले तीन दशकों से निरन्तर संचालित किया जा रहा है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 0–6 वर्ष तक के सभी बच्चों को पूरक पोषाहार, टीकाकरण, स्वास्थ्य जांच, विशेषज्ञ सेवा, स्कूल पूर्व अनौपचारिक शिक्षा तथा पोषाहार व स्वास्थ्य शिक्षा की समुचित व्यवस्था करने पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। योजना के अन्तर्गत प्रति एक लाख की आबादी पर एक बाल विकास परियोजना, प्रति 35 हजार की आबादी पर एक जनजातीय परियोजना, एक हजार की आबादी पर एक आंगनवाड़ी केन्द्र स्थापित किए जाने के प्रावधान निर्धारित किए गए हैं। विरल आबादी वाले पर्वतीय या रेगिस्तानी इलाकों में प्रति 300 की जनसंख्या पर तथा जनजातीय इलाकों में प्रति 150 की जनसंख्या पर एक मिनी आंगनवाड़ियों की स्थापना की जाती है। देश भर में वर्तमान में करीब 5.5 हजार परियोजनाओं के अन्तर्गत 7 लाख से भी अधिक आंगनवाड़ी केन्द्र स्थापित हैं जिनसे वर्तमान में लगभग 04 करोड़ बच्चों के साथ–साथ 01 करोड़ गर्भवती व स्तनपान कराने वाली माताएं लाभान्वित हो रही हैं। इसी प्रकार प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों की उपस्थिति बढ़ाने तथा उन्हें पोषक आहार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से बृहद स्तर पर मध्यान्ह भोजन योजना– 1995 के नाम से विभिन्न राज्य सरकारों के सहयोग से केन्द्र पुनर्निर्धारित योजना चलाई जा रही है। वर्ष 2007–08 से इसे शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े 3,427 ब्लाकों में कक्षा 6 से 8 तक के बच्चों के लिए भी विस्तारित कर दिया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य निम्न एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन और उपस्थिति बढ़ाने के साथ–साथ प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण को बढ़ावा देना व प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों के पोषण स्तर में सुधार लाना है। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सहायता और विभिन्न राज्य सरकारों के मिले–जुले अंशदान से देश भर में प्रतिवर्ष 11 करोड़ से भी अधिक बच्चों को प्राथमिक विद्यालयों में मध्यान्ह में पका–पकाया पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराया जा रहा है। केन्द्रीय बजट 2007–08 में केन्द्र सरकार द्वारा इस योजना हेतु 7,324 करोड़ रुपए की धनराशि स्वीकृत की गई है।

> वर्ष 2007–08 के केन्द्रीय बजट में सर्वशिक्षा अभियान हेतु 10,671 करोड़ रुपए की विशाल धनराशि आवंटित की गई है। उल्लेखनीय है कि सर्वशिक्षा अभियान तथा मध्यान्ह भोजन योजना के लिए वर्ष 2007–08 में गत वर्ष की तुलना में 35 प्रतिशत अधिक धनराशि का आवंटन किया गया है। इस बृहद अभियान में देश भर में 11 लाख बस्तियों में 192 मिलियन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। योजना के अन्तर्गत 8.5 लाख मौजूदा प्राथमिक विद्यालयों तथा 33 लाख मौजूदा शिक्षकों को भी सम्मिलित किया गया है और इस अभियान को सफल बनाने हेतु हर स्तर से हर सम्भव प्रयास भी किए जा रहे हैं।

बच्चों की शिक्षा को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से विशेष प्रकृति वाली कुछ विशिष्ट योजनाएं अशक्त और निर्बल वर्गों के कल्याणार्थ भी संचालित की जा रही हैं। इन योजनाओं में गरीब परिवारों के बच्चों को कक्षा 9 से 12 तक की शिक्षा का खर्च उठाने में माता–पिता की आर्थिक सहायता करने हेतु शिक्षा सहयोग योजना– 2001, पिछड़े क्षेत्रों में दलित वर्गों की बालिकाओं को आवासीय विद्यालयों में निःशुल्क व गुणवत्तायुक्त शिक्षा की व्यवस्था सुनिश्चित किए जाने हेतु कस्तूरबा गान्धी आवासीय बालिका विद्यालय योजना– 2004, एकल बालिका के परिवारों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से परिवार की इकलौती बालिका को सीबीएसई के विद्यालयों में 12वीं कक्षा तक की उत्तम व निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करने हेतु एकल बालिका निःशुल्क शिक्षा योजना – 2005, परीक्षाओं में श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाली बालिकाओं को माध्यमिक व उच्च शिक्षा हेतु प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उन्हें नकद प्रोत्साहन राशि प्रदान किए जाने हेतु बालिका शिक्षा प्रोत्साहन राशि योजना– 2006, परिवार की इकलौती कन्या को उच्च शिक्षा हेतु इन्दिरा गान्धी इकलौती बालिका पी.जी. छात्रवृत्ति योजना–2006, कक्षा 8 पास करने वाले मेधावी बच्चों को कक्षा 12 तक प्रतिवर्ष 6,000 रुपए की छात्रवृत्ति प्रदान करने हेतु योग्यता छात्रवृत्ति योजना–2007 जैसी कई योजनाएं संचालित की जा रही है। इनके अतिरिक्त दलितों, अल्पसंख्यकों, पिछड़े वर्गों, विकलांगों आदि वर्गों के बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक के लिए नियमित आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु अनेकों छात्रवृत्ति योजनाएं भी लागू की जा रही है। इन योजनाओं और कार्यक्रमों के संचालित किए जाने के फलस्वरूप सभी वर्गों में और सम्पूर्ण देश में शिक्षा के प्रसार और स्तर में समुचित बढ़ोत्तरी सम्भव हुई है।

बच्चों में शिक्षा का स्तर बढ़ाने के साथ–साथ संचालित की जा रही विभिन्न योजनाओं के साथ उन्हें बीमारियों से बचाकर उनके स्वास्थ्य एवं पोषण की समुचित व्यवस्था किए जाने के उद्देश्य से भी देश भर में कई महत्वपूर्ण कार्यक्रमों और

योजनाओं को संचालित किया जा रहा है। इनमें वर्ष 1975 से प्रारम्भ किए गए समन्वित बाल विकास कार्यक्रम हैं जिनके अन्तर्गत बच्चों में टीके से रोकी जा सकने वाली छः बीमारियों– खसरा, काली खांसी, टिटनेस, पोलियों, टी.बी. तथा डिप्थीरिया की रोकथाम के सफल प्रयास किए गए हैं। इनमें से पोलियो के नियन्त्रण पर विशेष ध्यान केन्द्रित करते हुए एक पूरक टीकाकरण की गतिविधि के रूप में वर्ष 1995 से 'पल्स पोलियो अभियान– 1995' के नाम से इसे अलग से भी लागू किया गया है जिसके अन्तर्गत 0 से 5 वर्ष तक के सभी बच्चों को बृहद स्तर पर कैम्प लगाकर पोलियो ड्रॉप्स पिलाई जाती है। जो बच्चे इन कैम्पों से छूट जाते हैं उन्हें घर–घर जाकर पोलियो की दवा पिलाने की व्यवस्था से शत–प्रतिशत बच्चों को इससे आच्छादित करने की कोशिशें की गई हैं जिससे शीघ्र ही देश को पोलियो से मुक्त किया जा सके। इसी क्रम में बच्चों की स्वास्थ्य सुरक्षा के उद्देश्य से वर्ष 1997 से प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम – 1997 के नाम से एक अन्य कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है जिसमें जन्मदर और महिला साक्षरता दर के अनुसार जिलों की श्रेणियां बनाकर क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के आधार पर वहां विभिन्न स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था की गई है। किशोरी बालिकाओं को आवश्यकतानुसार विशेष रूप से स्वास्थ्य एवं पोषण की विशेष व्यवस्था हेतु किशोरी शक्ति योजना – 2000 भी देश भर में वर्ष 2000 से लागू की जा रही है। गरीब, कामकाजी, बीमार माताओं के बच्चों की दिन में देखभाल, पूरक पोषाहार, स्वास्थ्य की देख–रेख आदि की व्यवस्था हेतु राष्ट्रीय शिशु सदन योजना–1994 भी वर्ष 1994 से ही लागू की जा रही है। इन स्वास्थ्य एवं पोषण के कार्यक्रमों के अतिरिक्त बच्चों के लिए अन्य संरक्षणात्मक योजनाओं में असाधारण सूझ–बूझ वाले उत्कृष्ट बच्चों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से वर्ष 1996 से राष्ट्रीय बाल पुरस्कार योजना– 1996, बाल कल्याण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान करने वाली संस्थाओं को प्रोत्साहित करने हेतु वर्ष 1979 से राष्ट्रीय पुरस्कार योजना– 1979 भी संचालित की जा रही है। इसी क्रम में बालिकाओं के संरक्षण और विकास पर विशेष ध्यान केन्द्रित किए जाने हेतु किशोरी शक्ति योजना के अतिरिक्त बालिका समृद्धि योजना– 1997, भाग्य श्री बाल कल्याण बीमा योजना – 1998 तथा बालिका श्री योजना– 2006 भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बच्चों के हितार्थ प्रयोग के तौर पर संचालित की गई कुछ ऐसी विशिष्ट योजनाएं भी संचालित की गई हैं जिन्हें अभी तक बृहद स्तर पर तो चलाया जाना सम्भव नहीं हो सका है लेकिन उनसे बहुत अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं।

ऐसी प्रायोगिक योजनाओं में शिशु के श्रेष्ठ आहार के स्रोत के रूप में संचालित की गई मानव दूध बैंक योजना ऐसी अनोखी योजना है जो उन शिशुओं के लिए वरदान साबित हुई है जो प्रसूति के तुरन्त बाद मां की मृत्यु हो जाने, मां के शरीर में दूध कम बनने या न बनने, मां का किसी भयानक बीमारी के शिकार होने जैसे किसी भी कारण से मां के स्तनपान से वंचित रह जाते हैं। देश में इस प्रकार का पहला मानव दूध बैंक करीब दो दशक पहले अर्थात वर्ष 1989 में मुम्बई के लोकमान्य तिलक अस्पताल में प्रारम्भ किया गया। हालांकि इसे ब्लड बैंक की तर्ज पर संचालित किए जाने के इरादे से प्रारंभ तो किया गया और काफी उपयोगी भी सिद्ध हुआ लेकिन फिर भी इसे खास लोकप्रियता हासिल नहीं हो सकी है। इनकी आवश्यकता और उपयोगिता के दृष्टिगत इन्हें अन्य शहरों व अस्पतालों में भी खोले जाने की आवश्यकता का अनुभव भी किया जा रहा है। इसी प्रकार फुटपाथी बच्चों के लिए अपना एक विशेष बैंक स्थापित करने सम्बन्धी योजना को बटरफ्लाई नामक स्वैच्छिक संगठन के सहयोग तथा नेशनल फाउन्डेशन ऑफ इण्डिया द्वारा प्रदत्त वित्तीय अनुदान से वर्ष 2001 में दिल्ली में एक अनूठी योजना के रूप में बाल विकास बैंक को स्थापित करके मूर्त रूप प्रदान किया गया जिसमें नई दिल्ली व दिल्ली रेलवे स्टेशन, अन्तर्राज्यीय बसअड्डा, कश्मीरी गेट, चांदनी चौक जैसे स्थानों को चिन्हित किया गया जहां बड़ी मात्रा में फुटपाथी बच्चे रहते हैं और वहां वे अपने बचाए हुए कुछ पैसों को बैंक में जमाकर अपनी आवश्यकता तथा सुविधानुसार बैंक से वापस प्राप्त कर सकें। साथ ही साथ छोटे–मोटे काम धन्धे शुरू करने के लिए ऐसे बच्चों को यहां से आसान शर्तों पर छोटी धनराशि ऋण के रूप में भी प्राप्त हो सके।

चाइल्ड हैल्प लाइन योजना भी एक 1098 नम्बर की 24 घन्टे दिन–रात चलने वाली निःशुल्क व अत्यन्त उपयोगी टेलीफोन सेवा है जिसे केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास मन्त्रालय के सहयोग से एक धर्मार्थी संगठन द्वारा देश भर के करीब 74 शहरों में संचालित किया जाने लगा है। इसकी उपयोगिता तथा योगदान को देखते हुए इसे अन्य प्रमुख शहरों में भी विस्तारित करने का प्रयास किया जा रहा है। इसे देखभाल तथा सुरक्षा की आवश्यकता होने अथवा संकट में फंसे बच्चों द्वारा अपनी समस्या के निराकरण हेतु आपात स्थिति में कभी भी प्रयोग किया जा सकता है। इस सेवा को संचालित करने में 83 चाइल्ड लाइन कॉल सेंटरों, 33 सहयोग सेवा केन्द्रों, 155 बाल अधिकार कर्मियों और करीब 1500 सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का सहयोग प्राप्त है जो प्रतिदिन परेशान बच्चों से औसतन 6000 टेलीफोन कॉल प्राप्त करते हैं और उनकी समस्याओं के निराकरण हेतु 2000

बच्चों तक प्रतिदिन अपनी पहुंच सुनिश्चित करते हैं। एच.आई. वी. एड्स के संक्रमण से बच्चों को बचाने तथा संक्रमित बच्चों की समुचित सुरक्षा हेतु एकीकृत बाल सुरक्षा योजना–2007, कक्षा 8 पास करने वाले कुशाग्र बुद्धि बच्चों को आगे की पढ़ाई जारी रखने हेतु अगले 4 वर्षों तक 6,000 रुपये वार्षिक के हिसाब से आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु योग्यता छात्रवृत्ति योजना–2007 तथा प्रत्येक जिले में एक पालना केन्द्र खोलकर वहां ऐसी बालिकाओं का पालन–पोषण सुनिश्चित करने हेतु जिन्हें उनके अभिभावक किसी भी कारणवश पालने में असमर्थ हैं, के लिए पालना योजना – 2007 के नाम से तीन नई योजनाओं को भी वर्ष 2007 में संचालित किया गया है।

बच्चों के कल्याण और विकास के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा संचालित की गई योजनाओं के अतिरिक्त इसी प्रकार की कुछ योजनाओं और कार्यक्रमों को विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा भी निजी संसाधनों से संचालित किया गया है। इन योजनाओं में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संचालित कक्षा 1 से 5 तक की सभी ग्रामीण व नगरीय मलिन बस्तियों की बालिकाओं को निःशुल्क स्कूली यूनिफार्म प्रदान किए जाने हेतु निशुल्क स्कूली ड्रेस योजना– 2005, गरीब परिवारों की कन्याओं के विवाह हेतु 11,000 रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु कन्या विवाह योजना– 2006, ग्रामीण दलित परिवारों की वर्ष 2003 के बाद पैदा हुई प्रत्येक बालिका को 18 वर्ष की आयु पूर्ण करने पर ब्याज सहित देय 800 रुपये के बचत पत्र तथा उनके माता–पिता को मुफ्त बीमा सुविधा प्रदान करने हेतु बालिका श्री योजना – 2006, इण्टरमीडिएट की परीक्षा में सर्वाधिक अंक पाने वाले विद्यार्थी को 5 लाख रुपये तथा विज्ञान वर्ग में सर्वाधिक अंक पाने वाले विद्यार्थी को 2 लाख रुपये की पुरस्कार राशि प्रदान करने वाली प्रतिभा प्रोत्साहन योजना– 2006, फुटपाथ पर रहने वाले या चाय आदि की दुकानों पर कार्य करने वाले बच्चों को निशुल्क चिकित्सकीय जांच और सुविधाओं को प्रदान करने हेतु स्ट्रीट चिल्ड्रन निःशुल्क सहायता योजना–2006, कुपोषित शिशुओं, बच्चों व गर्भवती माताओं को आवश्यक पोषण की व्यवस्था हेतु मिशन पोषण योजना– 2006, हरियाणा सरकार द्वारा अनुसूचित जाति व जनजाति की नवजात बालिकाओं को इन्दिरा विकास पत्र के माध्यम से आर्थिक संरक्षण प्रदान करने हेतु अपनी बेटी अपना धन योजना– 1994, 5वीं कक्षा से ऊपर पढ़ने वाली बालिकाओं को निशुल्क साइकिल प्रदान करने हेतु साइकिल उपहार योजना– 2004, किसी भी मां–बाप की दूसरी बेटी को सरकार की लाडली बेटी घोषित कर उसके समुचित पोषण, स्वास्थ्य व शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने हेतु लाडली बेटी योजना– 2005, 55 वर्ष से अधिक आयु वाले केवल कन्याओं के माता–पिता को 300 रुपये की नियमित आजीवन पेन्शन भुगतान कर सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु बालिका अभिभावक पेन्शन योजना–2006, झारखण्ड सरकार द्वारा गरीब परिवार की बेटियों को सरकारी आयोजन से सामूहिक विवाह कराने व उनके परिवार को आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु मुख्यमंत्री कन्यादान योजना– 2005, छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा अनुसूचित जाति व जनजाति की मेधावी बालिकाओं को प्रोत्साहन प्रदान करने हेतु निशुल्क स्कूटर योजना– 2005, गुजरात सरकार द्वारा कन्या भ्रूण हत्या कराने वाले दम्पत्ति व डाक्टर की सूचना देने वाले व्यक्ति को प्रोत्साहित करने हेतु सूचना पुरस्कार योजना– 2004, आंध्र प्रदेश सरकार द्वारा निर्धनतम परिवारों की बालिकाओं को माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा तथा उनके विवाह की व्यवस्था हेतु आर्थिक अनुदान प्रदान करने हेतु बालिका संरक्षण योजना– 1996, बिहार सरकार द्वारा स्कूल जाने वाली सभी छात्राओं को अन्य सुविधाओं के साथ–साथ निःशुल्क रूप से पोशाक उपलब्ध कराने हेतु निःशुल्क पोशाक योजना– 2004, राजस्थान सरकार द्वारा साधन विहीन परिवारों की बालिकाओं को समुचित पोषण तथा स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने हेतु आपकी बेटी योजना– 2005 तथा मध्य प्रदेश सरकार द्वारा शिक्षा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाली ग्रामीण बालिकाओं को नियमित छात्रवृत्ति और मुफ्त उच्च शिक्षा की व्यवस्था हेतु गांव की बेटी योजना – 2005, गरीब दलित परिवारों की बालिकाओं के नाम एक लाख रुपए की धनराशि जमा कर उन्हें सुरक्षित भविष्य प्रदान करने हेतु सुरक्षित कन्या योजना– 2006 एवं 5 वर्ष तक के सभी बच्चों को कुपोषण से बचाने हेतु बाल संजीवनी योजना– 2006 जैसी अनेकों योजनाएं विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा भी संचालित की जा रही हैं जिनके काफी उत्साहवर्द्धक परिणाम सामने आ रहे हैं।

बच्चों के लिए विभिन्न कल्याणकारी और विकासोन्मुखी योजनाओं के संचालन के लिए आवश्यक और पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था सुनिश्चित करने तथा उस पर समुचित प्रकार से नियंत्रण हेतु अनुश्रवण की प्रभावी व्यवस्था को निर्धारित किए जाने हेतु केन्द्र सरकार द्वारा तीन वर्ष पूर्व एक और महत्वपूर्ण कदम उठाया गया। जिसे 'चाइल्ड बजटिंग का नाम दिया गया है। इस व्यवस्था को वित्तीय वर्ष 2004–2005 से निरन्तर रूप से केन्द्रीय बजट का एक आवश्यक अंग बनाकर मूर्त रूप प्रदान किया गया है। चाइल्ड बजटिंग के अन्तर्गत पर्याप्त वित्तीय संसाधनों का आवंटन सुनिश्चित कर उनके भली–भांति सदुपयोग किए जाने हेतु निरन्तर निगरानी की व्यवस्था सुनिश्चित करना आवश्यक होता है। गत तीन वर्षों से प्रारम्भ की गई इस व्यवस्था के अन्तर्गत उपलब्ध आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि हमारे देश में बच्चों के स्वास्थ्य,

शिक्षा, मनोरंजन, विकास और उनके संरक्षण पर विश्व के अन्य प्रमुख देशों की तुलना में सकल घरेलू उत्पाद के अंश के रूप में बहुत कम संसाधनों का आवंटन किया गया है। इस सम्बन्ध में उपलब्ध आंकड़े बताते हैं कि केन्द्र सरकार द्वारा किए जाने वाले कुल वार्षिक व्यय का वर्ष 2004–05 में 2.45 प्रतिशत, वर्ष 2005–06 में 3.86 प्रतिशत तथा वर्ष 2006–07 में 4.91 प्रतिशत भाग ही बच्चों के लिए खर्च किया गया। यद्यपि आवश्यकता के हिसाब से इस हेतु, व्यय की गई धनराशि काफी कम रही है और इसमें निरन्तर रूप से वृद्धि के प्रयास किए जा रहे हैं। केन्द्रीय बजट वर्ष 2006–07 में बाल कल्याण हेतु कुल 4,255.51 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया था, वहीं वर्ष 2007–08 में इसे बढाकर कुल 5,053,33 करोड़ रुपए कर दिया गया है। हालांकि बढ़ती आवश्यकताएं और प्रतिबद्धताओं के चलते यह वृद्धि आशातीत नहीं कही जा सकती। इसमें और भी तेजी से वृद्धि किया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही बच्चों के विकास, सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करने के लिए अब तक अनेकों कानूनों और अधिनियमों के निर्माण, उन्हें प्रभावी और उपयोगी बनाने हेतु समय–समय पर उनमें संशोधन करने के साथ–साथ अनेक उपयोगी, कल्याणकारी व संरक्षणात्मक योजनाओं और विकास कार्यक्रमों आदि को बृहद स्तर पर संचालित किया गया है लेकिन इस दिशा में अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। केवल नियमों–अधिनियमों को बनाकर, विशिष्ट संस्थाओं का गठन करके, विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा और उनके लिए धनावंटन करके लक्ष्यों की पूर्ति किया जाना सम्भव नहीं है। वास्तविक अर्थों में लक्ष्यों की पूर्ति हेतु हमें निर्धारित की गई व्यवस्थाओं का समुचित रूप से कार्यान्वयन सुनिश्चित करना होगा। निर्धारित व्यवस्थाओं को व्यावहारिक और सरल बनाया जाना भी जरूरी है ताकि उन्हें वास्तविक धरातल पर उतारना सम्भव हो सके। विभिन्न कानूनों और कल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु उत्तरदायी सभी सम्बन्धित सरकारी कर्मियों, स्वयंसेवी संस्थाओं और जन प्रतिनिधियों की इस हेतु जवाबदेही निर्धारित किए बिना भी अच्छे परिणामों की आशा नहीं की जा सकती। अतः इस दिशा में कठोर कदम उठाना नितांत रूप से आवश्यक हो गया है।

बच्चों के समुचित विकास और संरक्षण हेतु निर्धारित व्यवस्थाओं का अनुपालन न करने वाले तथा इनमें शिथिलता बरतने वाले अभिभावकों के विरूद्ध भी दण्डात्मक कार्यवाही निर्धारित किया जाना जरूरी है। बच्चों को स्कूल न भेजने, उन्हें लालच में श्रम बाजार के हवाले कर देने तथा बच्चों के प्रति दुर्व्यवहार करने वाले अभिभावकों के प्रति सरकार और समाज द्वारा कठोरता का रुख अपनाना चाहिए। विभिन्न स्तरों से नियमित अनुश्रवण और निर्देशन से इन व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किया जाना भी जरूरी है। बाल संरक्षण और सुरक्षा को जन आंदोलन का स्वरूप प्रदान करने हेतु जन संचार माध्यमों, स्वयंसेवी संगठनों तथा त्रिस्तरीय पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करने हेतु उनकी अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक प्रयास भी किए जाने चाहिए। बच्चों के सुखद भविष्य और देश के नव–निर्माण की कल्पना को साकार करने के लिए अब सच्चे मन, श्रद्धा, निष्ठा और लगन से सभी आवश्यक उपाय तथा व्यवस्थाएं सुनिश्चित करनी होंगी तभी कामयाबी की संभावना बन सकेगी। निष्कर्ष रूप में यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि इन सभी व्यवस्थाओं को भली–भांति लागू करने के लिए सबसे पहले राजनैतिक, प्रशासनिक और सामाजिक प्रतिबद्धता को भी सुनिश्चित करना होगा तभी हम राष्ट्रीय नीति और सामाजिक आकांक्षाओं के अनुरूप, बच्चों के विकास और संरक्षण के लक्ष्य को पूरा करने में सफल हो पाएंगे।

(लेखक राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर प्रदेश में संयुक्त निदेशक हैं।)

ई–मेल : umeshagarwal215@yahoo.in

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। कुरुक्षेत्र में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, कुरुक्षेत्र कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

FREE SEMINAR
SUN.18th NOV. 2007
10 A.M TO 12 P.M
&
4.30 P.M TO 6.30 P.M

ALL YOU NEED TO KNOW ABOUT IAS & HOW TO CRACK IT

SUBJECTS OFFERED

- GENERAL STUDIES
- *LAW*
- *HISTORY*
- *POL.SCIENCE*

Batches Start From
22nd NOV. 2007

TEACHING THROUGH:-

IRPO
(INTENSIVE RESEARCH
AND
PRACTICE ORIENTED)

METHOD

"PERSONALISED
COACHING"

- IN SMALL BATCHES
[20-25] STUDENTS

NIRVANA
IAS ACADEMY

www.nirvanaias.com
262,Pocket H-17,Near Rohini West Metro Station
(Opp. Metro Pillar No.424)Sec-7,Rohini,Delhi-85
Ph:011- 47032447,20212687,9990471004
info@nirvanaias.com

Studio11 9811156551
KH-11/07/01

ग्रामीण बाल श्रमिकों का बढ़ता शोषण

वीरेन्द्र कुमार

बच्चे देश का भविष्य होते हैं। लेकिन तब जब देश उनकी सेवा में तत्पर रहे। किन्तु जब यही बच्चे 14 वर्ष से कम आयु में ही खानों ,खेतों में काम करने को मजबूर हो जाएं तो भला उन्हें देश का भविष्य कैसे कहा जा सकता है? किसी कारखानें में 14 वर्ष से कम आयु के मानसिक व शारीरिक श्रम करने वाले बच्चों को बाल श्रमिक कहा जाता है। संविधान के अनुच्छेद 24 में कहा गया है कि 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों से कारखानों में काम नहीं कराया जाएगा। विशेषकर ऐसा काम तो बिल्कुल नहीं जो बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता हो किन्तु आज इसका खुलेआम उल्लंघन हो रहा है।

जेनेवा (स्विटजरलैण्ड) स्थित अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन आई. एल.ओ. ने बालश्रम पर अपनी रिपोर्ट में बाल श्रमिकों को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है "ये वे किशोर नहीं हैं, जो दिन में कुछ घण्टे खेल और पढ़ाई से निकालकर खर्च के लिए काम करते हैं, वे बच्चे भी नहीं हैं जो पारिवारिक जमीन पर खेती में मदद करते हैं या घरेलू कामों में मदद करते हों बल्कि ये वे मासूम बच्चे हैं जो वयस्कों की जिन्दगी बिताने को मजबूर हैं। "हमारे देश की सरकार और गैर–सरकारी संगठन इस बात पर ध्यान नहीं दे रहे हैं कि जब सारी दुनिया सोती है तब सुबह के तीन बजे ठिठुरती ठण्ड में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को उनकी माताएं बिस्तरों से निकालकर काम के लिए भेजने पर मजबूर हो जाती हैं। इन बच्चों को पता भी नहीं चलता कि कब सूरज निकला, कब डूब गया, क्योंकि जब वे वापस आते हैं तो सूरज अस्त हो चुका होता है।

कौन कहे इन श्रमिकों की संख्या में कमी की, बल्कि उनकी संख्या में दिन–प्रतिदिन इजाफा हो रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आंकडों के अनुसार वर्तमान में विश्व में 10 करोड़ बच्चों को अपनी आजीविका के लिए श्रम करना पड़ता है और रहस्यमय बात यह है कि इनमें से 4 करोड़ 44 लाख सिर्फ भारत में हैं। बाल श्रमिकों की यह संख्या विभिन्न आकलनों के अनुसार भिन्न–भिन्न है। एक सर्वेक्षण के अनुसार विश्व में लगभग 25 करोड़ बाल श्रमिक हैं। जिनमें से 10 करोड़ भारत में है। आई. एल. ओ. के एक आकलन के अनुसार सारे विश्व में 25 करोड़ बाल श्रमिक हैं जिनमें 61 प्रतिशत एशिया; 32 प्रतिशत अफ्रीका तथा 7 प्रतिशत में अन्य महाद्वीप शामिल हैं। वहीं 5–14 आयु समूह के बाल श्रमिकों में आनुपातिक दृष्टि से सर्वाधिक बाल श्रमिक 40 प्रतिशत अफ्रीका में हैं।

केन्द्र सरकार के श्रम मंत्रालय द्वारा कराये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 30 करोड़ बच्चे हैं जिसमें से हर सातवां बच्चा मजदूरी के काम में लगा हुआ है। बाल श्रमिकों में 63 प्रतिशत बड़ी उम्र के तथा शेष 16 प्रतिशत नादान उम्र के हैं। भारत में कुल बाल श्रमिकों का 30 प्रतिशत खेती के काम में लगे हैं और इतने ही कारखानों में कार्यरत हैं। जबकि शेष पत्थर –खदानों,लघु एवं कुटीर उद्योगों ,घरेलू कार्यों आदि में लगे हुए हैं। जम्मू कश्मीर, तमिलनाडु तथा उत्तर प्रदेश में बाल श्रमिकों की संख्या 1लाख के आस पास है। नये सरकारी आंकड़ें के अनुसार भारत में कुल दो करोड़ बाल श्रमिक मौजूद हैं। जबकि गैर–सरकारी संगठनों के अनुसार यह संख्या 4 करोड 40 लाख है जो देश की कुल श्रम शक्ति का लगभग 6 प्रतिशत है। संयुक्त राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट के अनुसार 20 लाख से अधिक बच्चे यौन कर्मी के रूप में काम कर रहे हैं। इनका प्रयोग वैश्यावृत्ति कराने और अश्लील फिल्में बनाने आदि जैसे कार्यों में किया जाता है।

उद्योग जिनमें बाल श्रमिकों की अधिकता है

भारत के विभिन्न राज्यों में कुछ उद्योग ऐसे हैं जहां प्रमुख रूप से बाल श्रम केन्द्रित है। इन उद्योंगो की संख्या 10 करोड़ के आस– पास है। भारत के बच्चों का भविष्य इन्हीं कुछ चन्द उद्योगों में खराब हो रहा है। कुछ प्रमुख उद्योग निम्न हैं :

विभिन्न राज्यों में बाल श्रम

राज्य का नाम	संख्या	राज्य का नाम	संख्या
उत्तर प्रदेश	12,46,000	केरल	68,000
आंध्र प्रदेश	17,54,000	मध्य प्रदेश	13,72,000
बिहार	8,93,000	महाराष्ट्र	12,63,000
गुजरात	4,62,000	उडीसा	5,15,000
हरियाणा	1,42,000	पंजाब	1,79,000
जम्मू –कश्मीर	1,09000	राजस्थान	5,89,000
तमिलनाडु	8,71,000	दिल्ली	24,000
पश्चिमी बंगाल	5,23000	मिजोरम	31,000

माचिस एवं आतिशबाजी उद्योगः शिवकाशी (तमिलनाडु) में इस उद्योग में 50,000 से 80,000 के मध्य बाल श्रमिक (4से 14 वर्ष) कार्यरत हैं। ये नौनिहाल दिनभर खतरनाक रसायनों (पोटैशियमक्लेरेट, फास्फोरस, जिंक आक्साइड) के साथ इन उद्योगों में खेलते हैं।

पत्थर खनन उद्योग (आंध्र प्रदेश): इस उद्योग में लगभग 20 हजार श्रमिक कार्यरत हैं।

मत्स्य पालन उद्योगः केरल में इस उद्योग में 20 हजार बच्चे कार्यरत हैं। यहां बच्चे परिवार मजदूर के रूप में कार्य करते हैं।

हथकरघा उद्योगः तिरुअनन्तपुरम एवं तिरुपुर की हथकरघा इकाइयों में बाल श्रमिकों की संख्या 10 हजार से अधिक हैं। ये बच्चे बुनाई का काम करते हैं।

बीड़ी उद्योगः केरल और तमिलनाडु में 7 हजार श्रमिक बीड़ी बनाते हैं इनमें ज्यादातर लड़कियां हैं जो ठेके पर देर रात तक काम करती हैं।

ताला उद्योगः अलीगढ़ में 7000 से 10,000 तक बाल श्रमिक लगे हुए हैं।

कालीन उद्योगः वर्तमान में कालीन उद्योग में विभिन्न राज्यों में 10,0000 से 1,50,000 बालश्रमिक कार्य कर रहे हैं।

कांच उद्योगः फिरोजाबाद स्थित कांच उद्योग में लगभग 50 हजार बाल श्रमिक काम करते हैं। जहां इनका क्षेत्र कांच की ढुलाई और चूड़ियां बनाना आदि है।

रत्न पालिशः जयपुर के रत्न पालिश उद्योग में 13 हजार बाल श्रमिक कार्यरत हैं। ये बच्चे कम रोशनी वाले, हवा रहित कमरों में काम करते हैं। इससे इन बच्चों की आंखें कमजोर होती जा रही हैं।

बाल श्रम के असहनीय रूप

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बाल श्रम के बदतर रूपों को पारिभषित किया है।

- बच्चों की बिक्री एवं तस्करी, बलात एवं अनिवार्य श्रम, कृषि दासता आदि।
- बाल वैश्यावृत्ति, बाल श्रमिकों से अश्लील फिल्मों में काम कराना।
- नशीली दवाओं की बिक्री , भीख मंगवाना, चोरी करवाना, जेब कटवाना आदि।
- स्वास्थ्य एवं आदर्शों पर प्रतिकूल प्रभाव वाले कार्य कराना।
- अत्यधिक छोटे बच्चों से काम कराना।
- व्यावसायिक दृष्टि से बच्चों का दैहिक शोषण।

भील आदिवासी लड़कियां सब्जियां बेचती हुई

कारणः जो बाल श्रम के उत्तरदायी हैं

गरीब तबकों में परिवार नियोजन के प्रति अरुचि के कारण बाल मजदूरों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है यद्यपि इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि गरीबी बाल श्रमिक समस्या की प्रमुख जड़ है। जितने हाथ उतना काम वाली मानसिकता काम करती है। परन्तु यदि इसकी गहराई में देखा जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि गरीबी कम और उत्पादकों तथा नियोजकों के निहित स्वार्थ बाल श्रम के लिए अधिक जिम्मेदार हैं। वयस्क मजदूरों की तुलना में बाल श्रमिक अधिक सस्ती दरों पर उपलब्ध हैं तथा इसका शोषण भी अपेक्षाकृत आसान है क्योंकि इनमें विरोध, आंदोलन तथा हड़ताल की सम्भावना नगण्य रहती है तथा इनसे कम मजदूरी पर मनमाना काम लिया जा सकता है।

बाल श्रम के प्रमुख कारण है:

गरीबी– विकसित तथा विकासशील देशों में गरीबी एवं बड़े परिवारों के कारण निम्न आय वर्ग के माता–पिता स्वयं की आय के स्रोत द्वारा परिवार का भरण– पोषण करने में असमर्थ होते हैं। इसी कारण बच्चे 4 से 5 वर्ष की आयु में ही इस कुप्रथा का शिकार हो जाते हैं।

बेरोजगारी– रोजगार की धीमी गति के कारण भी बाल श्रमिकों की संख्या में निरन्तर इज़ाफा हो रहा है। बेरोजगारी के कारण बच्चा अपने परिवार की आय में सहयोग करने के लिए मजबूर हो जाता है। बेरोजगारी और बाल श्रम में घनिष्टता साफ है।

पारिवारिक सामंजस्य का अभाव– जब परिवार में सामंजस्य या एकता का अभाव रहता है तो परिवार मानसिक रूप से निर्धन और गरीब हो जाता है। इस कलह से असंतोष की भावना उत्पन्न होती है। ऐसे में अज्ञानतावश अधिक सुखद भविष्य की तलाश में घर त्याग कर बच्चे बाल श्रम में लग जाते हैं।

परम्परागत व्यवसाय– परम्परागत उद्योग जो वंशानुगत हो चुके है इनमें घरों के छोटे–छोटे बच्चे संलग्न हो जाते हैं और ये अपनी वास्तविकता से भटक जाते हैं।

बढ़ता औद्योगीकरण– औद्योगीकरण प्रगति और शहरी चकाचौंध के कारण बालश्रमिकों का रुख

दिन–प्रतिदिन शहरों की तरफ हो रहा है। एक सर्वेक्षण के अनुसार दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर प्रतिदिन 15–20 बच्चे आते हैं जो गरीबी के कारण घरों से भागते हैं या तो उनके माता– पिता खुद उन्हें भेजते हैं।

व्यावसायिक शिक्षा का अभाव– भारत जैसे देशों में ऐसी व्यावहारिक शिक्षा पद्धति का नितांत अभाव है जो न केवल माता–पिता को बच्चों को विद्यालय भेजने को प्रेरित करे ,बल्कि विश्वास भी दिलाए कि शिक्षा उनके बच्चों के भविष्य का निर्माण करेगी। संविधान के अनु0–45 के अनुसार संविधान के लागू होने के 10 वर्षों के अन्दर 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाएगी लेकिन इतने वर्षों के बाद भी आज यह सपना ही बना हुआ है। भारत में दी जाने वाली शिक्षा रोजगारपरक और व्यवसायपरक नहीं है। अतः शिक्षा को रोजगारपरक बनाने संबंधी समस्त प्रयास सरकार को करने चाहिए।

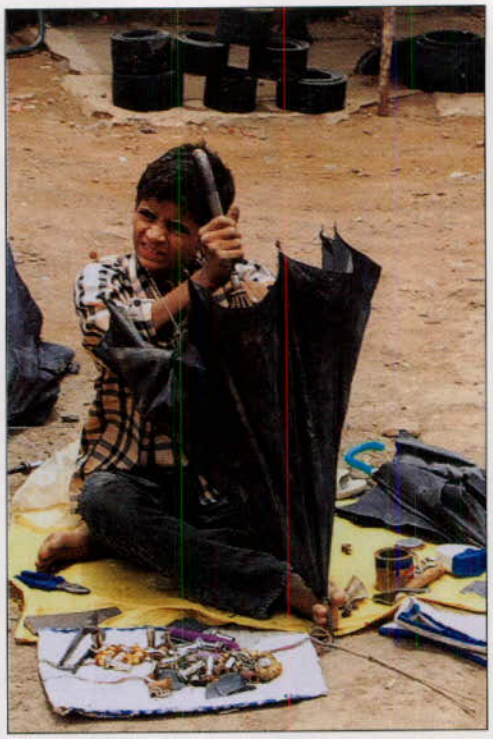

स्कूल नहीं – काम ही सही

समस्याएं जो बालश्रमिक झेल रहे हैं

विभिन्न उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों के समक्ष अनेक समस्याएं विद्यमान हैं जिनके चलते उनका जीवन नरकीय हो जाता है। राष्ट्रीय सहयोग एवं बाल विकास संस्थान की रिपोर्ट के अनुसार मुम्बई में बालश्रमिकों की समस्या विचारणीय है। यहां बालश्रमिक 12 से 16 घण्टे प्रतिदिन काम करने पर भी एक माह में 50 से 150 रुपये तक ही कमा पाते हैं। जबकि कुछ मजदूर तो केवल भोजन पर काम करते हैं। बाल श्रमिक जिन उद्योगों में कार्यरत हैं उनमें से कोई ऐसा उद्योग नहीं है जहां इन बच्चों को भयंकर रोग (टी.बी, कैन्सर, दमा, सांस की बीमारी) न होते हो और यहां चिकित्सकीय सुविधा भी नहीं मिल पाती है। दूसरी तरफ यदि ये बीमार बच्चे काम पर न आये तो उनके वेतन में कटौती कर दी जाती है। इस स्थिति में इन बच्चों को खाने के लिए रोटी नसीब नहीं होती है और ये दुनिया छोड़ कर चले जाते हैं।

बाल श्रमिकों के प्रति उद्योगपतियों का रवैया भी अमानवीय होता है विगत दशकों में कराए गये एक सर्वेक्षण से निम्न तथ्य सामने आये है:.

बाल श्रमिक समस्या के मूल में परिवार की गरीबी कम, बल्कि फैक्ट्री उद्योग, कम्पनी, संस्थान के मालिक का स्वार्थ अधिक है।

बालश्रमिकों को न तो कोई अवकाश, न उनके स्वास्थ्य की पर्याप्त देखभाल हो पाती है। उन्हें मनोरंजन का अवसर भी नहीं प्राप्त होते हैं। कुल मिलाकर बच्चे नरकीय जीवन जीने पर मजबूर हैं। कठिन परिस्थितियों में काम करने के कारण उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है और वे समाज पर बोझ बन जाते हैं।

बालश्रमिक प्रायः असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं। इनके कोई श्रम संगठन नही हैं।

बाल श्रमिकों की समस्याओं हेतु 1979 में श्री एस.एस. गुरुपदस्वामी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई थी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट में बाल श्रमिकों की स्थिति को कुछ इस तरह बताया :. "बच्चों के संदर्भ में श्रम तब एक बुराई का रूप धारण कर लेता है जब नियोक्ताओं द्वारा उनकी शारीरिक क्षमता के विपरीत काम लिया जाता है। जब उनके काम के घण्टे निश्चित न हो एवं उनकी शिक्षा, मनोरंजन तथा आराम का खयाल न रखा जाता हो जो उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक या खतरनाक हो"

बालश्रम उन्मूलन के सम्बंध में संयुक्त राष्ट्र के अन्तर्गत भारत का प्रयास

बालश्रम उन्मूलन के संबंध में यूनिसेफ, आई.एल. ओ, तथा यूनेस्को ने सम्मिलित रूप से यह प्रयास किया है कि प्राथमिक शिक्षा को निचले स्तर तक पहुंचाया जाय। इस कार्यक्रम का फोकस सामाजिक रूप से पिछड़े तथा हाशिए पर पड़े बच्चों पर केंद्रित है।

विश्व बैंक का सहयोगः विश्व बैंक ने भी भारत में बालश्रम के विषय में विकास के मुद्दे के रूप में गंभीरता से सोचना आरम्भ कर दिया है। विश्व में बालश्रम को कम करने तथा खत्म करने में प्रभावित देशों की सहायता करने की प्रतिबद्धता, इसके आधिकारिक दस्तावेजों में परिलक्षित है। विश्व बैंक ने बाल श्रम को भारत के लिए अपने ऐजेंडे में प्रमुखता प्रदान की है। बाल श्रम उन्मूलन हेतु प्रमुख कार्यक्रमों पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनः बाल श्रम की समस्या को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए प्रयासरत अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में एम्सटर्डम (फरवरी 2001), ओसियो सम्मेलन (2002) तथा स्टाकहोम सम्मेलन मुख्य है। ये सम्मेलन बालश्रम उन्मूलन हेतु विश्व जनमत तैयार करने में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन (1979) के 87वें सत्र में एक नया अनुबन्ध–182 सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया जो विश्व से बालश्रम के सबसे खराब रूप को मिटाने पर केंद्रित है।

भारत की प्रतिक्रियाः भारत सरकार पर बालश्रम उन्मूलन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय दबाव बढ़ रहा है। मुख्यतः अमेरिका और जर्मनी जैसे पश्चिमी देश ऐसी वस्तुओं के आयात पर प्रतिबंध लगा रहे हैं जिनके निर्माण में बालश्रम का प्रयोग किया गया है। भारत का कालीन उद्योग उनके आक्रमण और विरोध जताने का प्रमुख विषय है। बालश्रम के विरूद्ध अन्तर्राष्ट्रीय जनमत तैयार करते समय भी वे भारत के कालीन उद्योग को निशाना बनाते हैं। अमेरिकी कांग्रेस ने भारत को धमकी दी है कि वह भारत से ऐसी वस्तुओं के आयात पर प्रतिबन्ध लगा देगा जिसमें बालश्रम का उपयोग किया गया हो। भारत सरकार ने कालीनों पर बाल श्रम मुक्त जैसे लेबल लगाने पर विचार किया है। बाल श्रम द्वारा निर्मित वस्तुएं विश्व व्यापार संगठन के मुख्य एजेंडे में हैं।

अगस्त 1994 में गठित श्रम मानकों के लिए भारतीय आयोग का सुझाव है कि श्रम मानकों और व्यापार में सम्बन्ध को समाप्त करने या पूरी तरह आत्मसमर्पण कर देने के बजाय, भारत को औद्योगिक राष्ट्रों पर दबाव डालने चाहिए कि वह भारत में बाल श्रम को समाप्त करने के लिए आर्थिक सहायता दे न कि भारत से आयात पर प्रतिबंध लगाये। भारत सरकार ने बालश्रम की समस्या से निपटने के लिए संवैधानिक (अनु0–24), वैधानिक तथा प्रगतिशील उपाय अपनाएं हैं। इसके बावजूद प्रतिबंधित क्षेत्रों में बालश्रम की समस्या यथा विद्यमान है जिसका मुख्य कारण है बालश्रम सम्बंधी कानूनों तथा बच्चों के कल्याण के लिए विकासात्मक कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के प्रति उदासीनता। हमें और हमारे देश के सभी नागरिकों और सरकारों को बाल श्रम उन्मूलन के निम्नलिखित प्रयासों को क्रियान्वित करना होगा।

- बाल श्रमिकों के उन्मूलन सम्बन्धी कानूनों का कड़ाई से पालन एवं नियम का उल्लंघन करने वाले को कठोर सजा। बाल श्रम वाले क्षेत्रों में शैक्षिक वातावरण के विकास तथा स्वास्थ्य में सुधार।
- भविष्य में बच्चों का कार्य क्षेत्र में प्रवेश न हो, इस दिशा में प्रयास।
- बच्चों के काम की परिस्थितियों का नियमन एवं सुधार।
- बच्चों के कल्याण एवं सेवा सुविधाओं और साथ–साथ शैक्षणिक सुविधाओं का विस्तार।
- विभिन्न राज्यों में बाल श्रमिकों की संख्या के अनुरूप उसे पूर्ण रूपेण समाप्त करने हेतु समयबद्ध लक्ष्य का निर्धारण।
- नियोक्ता, मजदूर संगठनों एवं स्वयंसेवी संगठनों द्वारा बालकल्याण कार्यक्रमों को प्रोत्साहन।
- बाल श्रम उपयोग करने वाले उद्योगों की पहचान।
- जनचेतना हेतु कार्यशालाओं, गोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन।

समीक्षात्मक मूल्यांकन

निष्कर्षतः यह कहा जाता है कि बाल श्रम तथा बाल शोषण के अन्य प्रकार एक अन्तर्राष्ट्रीय यथार्थ हैं। यह समाज के लिए कलंक है। यहां तक कि विकसित देशों में भी बालश्रम की समस्या विद्यमान है, परन्तु इस तथ्य की अनदेखी कर दी जाती है। इस समस्या का प्रमुख कारण प्रभावित क्षेत्रों में निर्धनता की समस्या है। यद्यपि निर्धनता ही एक मात्र कारण नही हैं। यद्यपि भारत में किसी भी प्रकार का बालश्रम या शोषण प्रतिबंधित है फिर भी किसी न किसी रूप में यह भारत में विद्यमान है और इसके उन्मूलन के लिए कोई ठोस प्रयास सरकारी स्तर पर नहीं किये गये हैं। किसी भी सभ्य समाज में बाल शोषण की समस्या उस समाज के लिए डूब मरने वाली बात है। विकासशील देशों के सामाजिक कार्यकर्ता बालश्रम की समस्या के कारण बेहद शर्मिंदगी महसूस करते हैं। अतः वे इस समस्या के उन्मूलन हेतु जागरुकता पैदा करते हैं और इसके विरूद्ध जनमत तैयार करते हैं। वे देश के कानून निर्माताओं को प्रभावित करते हैं और उन्हें उस समस्या की समाप्ति हेतु उपयुक्त विधान बनाने के लिए प्रेरित करते हैं।

परन्तु इन नियमों के कार्यान्वयन को सुनिश्चत करने के ठोस उपाय नहीं किये जाते हैं। परिणामस्वरूप समस्या ज्यों की त्यों रहती है। सरकार को चाहिए कि वह बालश्रम जैसी समस्याओं को मानव विकास के कार्यक्रमों के साथ जोड़ कर देखे। निर्धनता और बालश्रम की समस्या में एक गहन सम्बंध पाया जाता है। यदि निर्धनता का निवारण कर दिया जाय तो इस समस्या से एक सीमा तक निजात पाया जा सकता है। बालश्रम एक विकट सामाजिक एवं आर्थिक समस्या है जिसके उन्मूलन के लिए एक सतत एवं दीर्घकालीन बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है। इस रणनीति के अन्तर्गत बालश्रम कानूनों का क्रियान्वयन, ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा का सुदृढ़ीकरण, विभिन्न कार्यक्रमों की सहायता से बाल श्रमिकों के परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार, रोजगार उत्पादक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन तथा बच्चों को काम पर जाने से रोकना आदि उपाय सम्मिलित है। बालश्रम की समस्या एक ऐसी सामाजिक बुराई है जिसके लिए समाज के सभी वर्गों में जागरुकता के प्रसार तथा एक परिवर्तित दृष्टिकोण की आवश्यकता है। बाल श्रम उन्मूलन जैसे पावन कार्य को इच्छित परिणति तक पहुंचाने के उद्देश्य से सरकार, मीडिया तथा गैर–सरकारी संगठनों को पारस्परिक समन्वय के साथ कार्य करने की आवश्यकता है।

(लेखक कानूनी एवं राजनीतिक मामलों के जानकार हैं।)
ई–मेल : verendera-876@rediffmail.com

बाल श्रम : एक कलंक

संदीप कुमार

वह नहीं जानता कि क्या होता है बालपन, बालमन और बालहठ। 'मैं चाहे ये करुं, मैं चाहे वो करुं, मेरी मर्जी...' गाने से वो इत्तेफाक नहीं रखता। वह दूसरों की मर्जी से चलता है, उठता है, बैठता है, सोता है, जागता है और काम करता है। उसे भूख नहीं लगती क्योंकि उसे कब 'भूख' लगनी चाहिए और उसे कब भोजन मिलना चाहिए– यह फैसला भी दूसरे ही लेते हैं। गाली–गलौज और मारपीट भी उसके 'भोजन' का अहम हिस्सा होता है। वह खिलौने से भले ही कभी खेल न पाया हो पर दूसरे उसके साथ 'खिलौने' की तरह खेल–खिलवाड़ जरूर कर लेते हैं। वह धीरे–धीरे अपना मूल नाम खो देता है और छोटू, रामू.....कहलाने लगता है। शायद! एक बाल मजदूर का कुछ–कुछ इसी तरह का परिचय होता है और बाल श्रम की भी यही परिभाषा होती होगी।

बचपन भार – घर से बाहर

बच्चों का भोलापन, नटखटपन, चंचलपन, चुलबुलापन, बाल–सुलभ चेष्टाएं और क्रीडाएं किसे मुग्ध नहीं करतीं। इस भरी जवानी में बचपन याद आने पर हम गुनगुना लेते हैं– 'मुझको लौटा दो वो बचपन का सावन, वो कागज की कश्ती, वो बारिश का पानी..'। पर क्या कभी हम सोच पाते हैं उन बच्चों के बारे में जो बाल्य–काल में भी अपना 'बचपन' जी नहीं पाते और जिनके कंधे पर लाद दी जाती है दो जून की रोटी की जुगाड़ करने की जिम्मेवारी। इसीलिए बच्चे की उम्र के होते हुए भी ये 'बूढ़े' हो जाते हैं और ऐसे 'बूढ़ों' (बाल–मजदूरों) की संख्या छह करोड़ के आसपास बताई जाती है। आंकड़ों और तथ्यों की मगजमारी में न भी पड़े तो भी इतना जरूर कहा जा सकता है कि हमारे चारों ओर बाल–मजदूरों की फौज खड़ी है। यह लगभग सही ही धारणा है कि स्कूल नहीं जाने वाला हर बच्चा (चाहे कारण जो हो) बाल–मजदूर है। क्या सचमुच यह एक राष्ट्रीय और सामाजिक कलंक नहीं कि हमारे देश में करोड़ों बच्चे अपनी शिक्षा–स्वास्थ्य और बालपन की कीमत पर शोषण के सान्निध्य में दिन–रात खटते हैं।

बाल–मजदूर के कई रूप हमें चाचा नेहरू और काका कलाम के इस देश में देखने को मिलते हैं। बाल–मजदूरों का एक बड़ा वर्ग हमें होटलों–ढाबों में प्लेटें मांजते या गैराजों में नट–बोल्ट कसते दिखता है। इसके अलावा घरों में घरेलू नौकरों के रूप में भी छोटे–छोटे बच्चे काम किया करते हैं। इनमें लड़कियों की संख्या भी कम नहीं होती। विरोधाभास देखिए कि इन बच्चों से बेहद अधिक काम लिया जाता है और बदले में इन्हें काफी कम मेहनताना दिया जाता है। सर्दियों में ठिठुरते हुए, गर्मियों में झुलसते हुए और बारिशों में भीगते हुए इन्हें काम करना होता है। मामूली बातों पर इन बच्चों को मालिकों से मार खानी पड़ती है या गाली–दुत्कार सुननी पड़ती है। बाल मजदूरों का यह वर्ग उत्तर से दक्षिण और मेट्रो से पास के मुहल्ले तक दिख जाता है।

बाल–मजदूरों का एक वर्ग हमें कष्टसाध्य और जोखिम भरे कामों में भी संलग्न दिख जाएगा। इस वर्ग में आने वाले बच्चे कालीन, जरी या कशीदाकारी इकाइयों, बीड़ी, माचिस या पटाखा फैक्ट्रियों, खानों–खदानों, ईंट भट्ठा या पत्थर तोड़ने जैसे कठिन और खतरनाक कार्यों में नियोजित हैं या कहें कि जबरिया नियोजित किए गए हैं। एक तरह से इन्हें गुलाम बनाकर बेहद तंग जगह में रखा जाता है और इनसे दिन–रात काम लिया जाता है। ऐसे बच्चों को बेहद दमघोंटू, अस्वास्थ्यकर और प्रदूषित माहौल में अपना बालपन अपने नियोक्ता के लाभ के लिए झोंकना पड़ता है। हालांकि बीच–बीच में स्वयंसेवी संस्थाओं और पुलिस की मदद से कुछ बच्चों को ऐसे खतरनाक कामों से निकाला जाता है पर यह सिलसिला रुका नहीं है। बाल वेश्यावृति को भी एक प्रकार से बाल–मजदूरी की श्रेणी में रख सकते हैं। अपनी मर्जी के विपरीत कम उम्र की बच्चियों को इस धंधे में धकेल दिया जाता है। राष्ट्रीय महिला आयोग के 'खोया हुआ बचपन' रिपोर्ट के मुताबिक देश में लगभग छह लाख बाल वेश्याएं हैं।

बाल–मजदूरों का एक वर्ग ऐसा भी है जो भुगतान–रहित होता है। दरअसल इस वर्ग के बच्चे बचपन से ही किताब–कॉपी छोड़कर पारिवारिक और परंपरागत कामों में शामिल होकर बड़ों का साथ देने का काम करते हैं। ग्रामीण भारत में खेती, पशुपालन, मछलीपालन व अन्य परंपरागत कामों में करोड़ों बच्चे–बच्चियां संलग्न हैं। जनगणना के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्र में जो बाल–मजदूर हैं उनका 84 फीसदी हिस्सा ऐसे ही बच्चों का है जो भुगतान–रहित बाल–श्रम में संलग्न है और पारिवारिक–पारंपरिक कार्यों में नियोजित है।

बाल–मजदूरों का एक वर्ग हमें और भी देखने को मिलता है। ऐसे बच्चे कचरा, प्लास्टिक–पेपर आदि चुनते हैं और उन्हें बेचकर दो पैसा कमाते हैं। स्टेशनों–पड़ावों पर अखबार या खाने–पीने की सामग्री बेचने वाले, कार पोंछने वाले, जूते पॉलिस करने वाले बच्चे भी ऐसे ही वर्ग में आते हैं। यूं तो ये बच्चे प्रत्यक्षतः किसी के अधीन काम तो नहीं करते पर फिर भी असामाजिक तत्वों के शोषण से बच नहीं पाते।

इसमें कोई दो राय नहीं कि बाल–श्रमिक समाज के बेहद गरीब, अभावग्रस्त और बेबस तबके से आते हैं। बाल–श्रम और गरीबी में चोली–दामन का साथ होता है। एक गरीब व्यक्ति के लिए उसके बच्चे सम्पत्ति के माफिक होते हैं और बच्चे एक तरह से परिवार के अतिरिक्त आय के स्रोत माने जाते हैं। या तो बच्चे काम में सहयोग कर परिवार और परिजन को राहत देते हैं या फिर होटलों–गैराजों आदि जगहों पर नियोजित होकर पारिवारिक आय में इजाफा करते हैं। कुछ मामलों में पाया गया है कि परिवारों की आय का तीस–चालीस फीसदी हिस्सा तो बाल–मजदूरों की कृपा पर भी निर्भर है।

शिक्षा और इसकी उपलब्धता की स्थिति भी कम उम्र में बच्चों को काम करने को उन्मुख करती है। कई स्कूल या तो आबादी से दूर हैं या फिर शिक्षा समुचित नहीं है और अगर शिक्षा उपलब्ध है भी तो बेबस परिवारों के बूते से बाहर। ऐसे में परिजन यह भी सोचने लगते हैं कि पढ़ने–लिखने में बच्चा जो समय और पैसा बर्बाद करेगा, उससे अच्छा है कि कोई काम–धंधा या हुनर सीख ले ताकि दो पैसा आने की गारंटी तो हो जाए। दरअसल मौजूदा शिक्षा–व्यवस्था रोजगार की गारंटी दे नहीं सकती और इस कारण भी निम्न तबके वाले लोगों का विश्वास डिगता है। इसलिए वे अपने नाबालिग बच्चों को या तो हुनर सीखने गैराज या दर्जी की दुकान में लगा देते हैं या फिर प्लेटें मांजने होटलों–घरों में भेज देते हैं।

कह सकते हैं कि पेट (गरीबी), स्लेट (शिक्षा) और प्लेट (मजदूरी) में जंग चलता रहता है और बाल–श्रम ही विकल्प के रूप में उभरता है। हालांकि अनुच्छेद–24 में 14 साल से कम उम्र के बच्चों को किसी भी कारखाने, खान या अन्य खतरनाक व्यवसाय में लगाने पर प्रतिबंध है और बाल श्रम (प्रतिषेध और विनियमन) अधिनियम, 1986 में इसके लिए दण्ड के भी प्रावधान हैं फिर भी समाज में बाल श्रम जारी है। बावजूद इसके कि 14 साल तक की आयु के बच्चों का निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने को मौलिक अधिकार बना दिया गया है, करोड़ों बच्चों को अपने पेट और परिवार के लिए स्लेटें छोड़कर प्लेटों से नाता जोड़ने को विवश होना पड़ रहा है। सरकारी आंकड़े भी तसदीक करते हैं कि 14 साल तक के सवा करोड़ बच्चे बाल श्रम करने को मजबूर हैं और साढ़े तीन करोड़ बच्चे (6 से 14 साल के) स्कूलों से बाहर हैं। यानी कहीं–न–कहीं बाल श्रम की जड़ें गहरी हैं जिसका उन्मूलन बेहद जरूरी है।

बाल–श्रम न सिर्फ बच्चों के लिए अभिशाप के समान है बल्कि यह समाज और देश के माथे पर कलंक है। कभी इन बच्चों का ख्याल करके हमें सोचना चाहिए कि छोटी–सी उम्र में ये बच्चे किस कदर शारीरिक और मानसिक संताप झेलते हैं। सिर्फ बाल–श्रम पर वातानुकूलित सभागारों में सेमिनार करने से लाभ नहीं मिलने वाला और न ही बाल–श्रमिकों के साथ नेताओं और सेलिब्रिटीज के फोटो अखबार में यदा–कदा छपने से ही बच्चों का कल्याण होने वाला है। हम देखते हैं कि गाहे–बगाहे पुलिस, श्रम विभाग और एनजीओ के सहयोग से छापामारी कर कुछेक बाल–श्रमिकों को मुक्त कराया जाता है। इससे बाल–मजदूरों की संख्या में कमी जरूर हो सकती है पर बाल–श्रम का उन्मूलन नहीं होने वाला।

जरूरत इस बात की है कि गरीबी उन्मूलन पर ध्यान दिया जाए और शिक्षा, वह भी रोजगारपरक शिक्षा उपलब्ध करायी जाए। स्कूल ड्रॉपआउट जीरो पर लाया जाए और अभिभावकों के 'पढ़ लिखकर क्या करेगा' वाली प्रवृत्ति को हतोत्साहित किया जाए। हम देखते हैं कि केरल, जहां साक्षरता दर शानदार है और स्कूल ड्रॉपआउट शून्य है, वहां बाल–श्रम में दो प्रतिशत बच्चे ही संलग्न हैं जबकि राष्ट्रीय स्तर पर तकरीबन छह–सात प्रतिशत बच्चे बाल–श्रम करते हैं। इससे साफ है कि जैसे–जैसे साक्षरता दर बढ़ेगी और स्कूल ड्रॉपआउट शून्य की ओर अग्रसर होगा, बाल–श्रम भी क्रमिक रूप से घटता जाएगा।

चूंकि बाल–श्रम एक सामाजिक कलंक है सो इसके लिए हम–आप सबको अपने प्रकार से सामाजिक कदम उठाने चाहिए। हम उन लोगों का प्रतिकार और बहिष्कार कर सकते हैं जो बच्चों से काम लेते हैं और उनका शोषण करते हैं। ऐसा नहीं है कि काम करने वाले बालिग लोगों की कमी है और बाल–श्रम ही एकमात्र उपाय है। आकलन बताते हैं कि जहां छह करोड़ बच्चे बाल–श्रम करते हैं वहीं तकरीबन साढ़े छह–सात करोड़ युवा बेरोजगार हैं। मतलब कि बड़ों के स्थान पर बच्चों को ही नियोजित कर दिया गया है। सचमुच समस्त भारतवासियों के लिए यह एक कलंक के समान नहीं तो और क्या कि बड़े बेरोजगार बैठे हैं और बच्चे बाल–श्रम करने को मजबूर हैं। जरा सोचिए! जरुर सोचिए!!

(लेखक टीवी पत्रकार हैं।)

ई–मेलः sandybaba81@yahoo.com

बाल श्रमिक एक सामाजिक अभिशाप

मनीष कुमार श्रीवास्तव

भारत का भविष्य बच्चों में निहित है। बच्चे देश के कर्णधार और अपने परिवार की धरोहर हैं। इसलिए परिवार और सरकार का यह दायित्व बनता है कि वे इन नौनिहालों की रक्षा करें और बाल मजदूरी जैसे घोर अभिशाप से उन्हें मुक्त कराएं। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बाजार की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने की प्रवृत्ति ने बाल मजदूरी की संस्कृति को और प्रगाढ़ कर दिया है। विकसित और विकासशील देश दोनों ही इस समस्या से जूझ रहे हैं। सम्पूर्ण मानव समाज के लिए कलंक बन चुकी यह समस्या अपना विकट रूप धारण कर रही है। अन्य गम्भीर समस्याओं की भांति इस अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का प्रभावपूर्ण निदान करना अति आवश्यक है। वैसे तो बालश्रम आज की शताब्दी की देन नहीं है बल्कि यह प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। लेकिन वैश्वीकरण के बाद यह अपने बदतर रूप में सामने आयी है। इसे दूर करने के लिए सरकार और गैर–सरकारी संगठन आज भी प्रयासरत हैं।

बालश्रम की समस्या से आज न केवल तीसरी दुनिया के देश (पिछड़े देश) ग्रस्त हैं बल्कि विकसित देश भी इस समस्या का सामना कर रहे हैं। अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी आदि देशों में बालश्रम की घटनाएं निरन्तर तेजी से बढ़ रही हैं। दिखाने के लिए तो विकसित देश विकासशील देशों से होने वाले आयातों पर इस कारण प्रतिबन्ध लगाते हैं कि वे वस्तुएं बाल श्रमिकों द्वारा बनाई गई हैं लेकिन अपने ही देश में वे युवा पीढ़ी को धन का लालच देकर बालश्रम पर मजबूर कर देते हैं। संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय बाल संकट कोष (यूनीसेफ) द्वारा 2005 में जारी एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व भर में 24.6 करोड़ बच्चे किसी न किसी प्रकार के श्रम करने को मजबूर हैं। इनमें से 15.2 करोड़ एशिया, 7.6 करोड़ अफ्रीका तथा शेष 1.8 करोड़ बाल श्रमिक लैटिन अमेरिकी देशों व अन्य देशों में मौजूद हैं। वैश्विक स्तर पर अगर देखा जाय तो पाकिस्तान में बनने वाली कालीनों का 80 प्रतिशत 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चे ही बनाते हैं। बंग्लादेश में बड़े पैमाने पर बच्चे टी–शर्ट बनाने वाले उद्योगों में कार्यरत हैं। दक्षिण अफ्रीका में तो हजारों बच्चे घरेलू नौकरों के रूप में काम करते हैं।

मालिकों के डर से सहमे हुए बैठे बाल मजदूर

बालश्रम– वर्तमान परिप्रेक्ष्य

हमारे देश की कुल आबादी का 15.42 प्रतिशत बच्चे हैं और अन्य देशों की ही तरह भारत में भी बालश्रम की समस्या अत्यन्त गम्भीर होती जा रही है। प्रत्येक वर्ष बाल दिवस (14 नवम्बर) बड़े ही अच्छे तरीके से मनाया जाता है। इस अवसर पर सभी दिग्गज विद्वान और राजनेता मिलकर अनेकों रणनीति तैयार करते हैं लेकिन दुःख की बात यह हैं कि ये रणनीतियां सिर्फ उसी दिन सीमित रह जाती हैं। यहां तक कि यूनेस्को ने भारत को उन देशों में शामिल कर दिया है जो सबको शिक्षा देने का लक्ष्य अभी पूरा नहीं कर पाये हैं। यूनेस्को ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि 'सबके लिए शिक्षा' के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा बाल मजदूरी है। बालश्रम से सम्बंधित अधिकांश बच्चे ग्रामीण क्षेत्रों के हैं और उनमें भी लगभग 60 प्रतिशत 10 वर्ष से कम आयु के हैं। व्यापार एवं व्यवसाय क्षेत्र में 23 प्रतिशत तथा घरेलू कार्यों में 37 प्रतिशत बालश्रमिक कार्यरत हैं। जहां तक शहरी क्षेत्रों की स्थिति का सवाल है वहां उन बच्चों की संख्या अधिक है जो कैन्टीन, रेस्टोरेन्ट और फेरी लगाने में संलग्न है। कुछ बच्चे तो खतरनाक उद्योगों में भी कार्यरत हैं। जैसे तमिलनाडु के कुछ जिलों में पटाखा और माचिस के कारखानों में लगभग 50,000 बच्चे कार्यरत हैं। उत्तर प्रदेश के फिरोजाबाद के कांच कारखाने में लगभग 46000 बच्चे और कालीनों के कारखानों में 1 लाख बच्चे काम कर रहे हैं। इसी तरह बनारस में 5000 बच्चे रेशम बुनने के कार्य में तथा दिल्ली में 60000 से अधिक बच्चे ढाबों या चाय की दुकानों पर कार्य कर रहे हैं।

मिर्जापुर में काम करने वाले लाखों बच्चे भागने की कोशिश में पीटे जाते हैं और इन्हें वर्षों वेतन भी नसीब नहीं होता है। 1986 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा कराए गये सर्वेक्षण के मुताबिक भारत में बाल श्रमिकों की संख्या 1 करोड़ 73 लाख बताई गई है। वहीं वर्ष 2001 की जनगणना के आंकड़ों के मुताबिक यह संख्या 1 करोड़ 25 लाख है। राष्ट्रीय श्रम संस्थान के ताजा आंकड़ों के अनुसार वर्तमान में 6 से 14 वर्ष तक के कुल बच्चों की संख्या 22 करोड़ है जो आबादी का 22 प्रतिशत हैं। भारत में 2 करोड़ 26 लाख बच्चे पूर्णकालिक श्रमिक के रूप में तथा 1 करोड़ 85 लाख बच्चे अंशकालिक श्रमिक के रूप में कार्यरत हैं। इन सभी आंकडों से एक बात तो साफ हो जाती है कि बालश्रम की समस्या का संकेन्द्रण कुछ राज्यों और उद्योग विशेष तक सीमित है। यह स्थिति एक चिन्ताजनक स्थिति है जिस पर समय रहते विचार करना है। देश में बाल श्रमिकों की बढ़ती हुई संख्या और उनके शोषण को रोकने के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न उद्योगों को खतरनाक उद्योगों की श्रेणी में रखा है–

- माचिस एवं पटाखा निर्माण उद्योग, शिवकाशी (तमिलनाडु)
- डायमंड पालिशिंग उद्योग, सूरत (गुजरात)
- कांच एवं चूड़ी उद्योग, फिरोज़ाबाद (उत्तर प्रदेश)
- पीतल के बर्तन एवं कलात्मक वस्तु विनिर्माण उद्योग, मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश)
- हस्तनिर्मित कालीन उद्योग, मिर्जापुर – भदोही (उत्तर प्रदेश)
- ताला उद्योग एवं चाकू उद्योग, अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)
- स्लेट उद्योग, मंदसौर (मध्य प्रदेश)

उपर्युक्त सभी उद्योगों के पूंजीपतियों द्वारा बाल श्रमिकों का जमकर शोषण किया जाता है। इन कारखानों द्वारा नियमों का उल्लंघन भी जोरो पर है। बच्चे दरिद्रता के कारण नौकरी करते हैं। क्योंकि उनकी कमाई के बिना उनके परिवारों का जीवन स्तर बदतर हो जाता है। बालश्रम के सम्बन्ध में पूंजीपतियों का यह तर्क है कि नौकरी बच्चों को भूखों मरने से रोकती है। वहीं अधिकारीगण का कहना है कि सरकार उन्हें पर्याप्त वैकल्पिक नौकरियां नहीं दे पा रही है। समाज वैज्ञानिकों का भी यही कहना है कि बालश्रम का मुख्य कारण निर्धनता है। बालश्रम से उद्योगपति तो अपनी जेब भर लेते हैं लेकिन देश के भविष्य के बारे में उन्हें फिक्र ही नहीं है। इस सम्बन्ध में सरकार को अपने द्वारा बनाये गये नियमों का कड़ाई से पालन करना चाहिए।

बालश्रम के विविध रूप

बालश्रम एक विकट सामाजिक बुराई है। भारत सरकार द्वारा बालश्रम पर नियुक्त समिति के अनुसार बाल श्रमिकों में जनसंख्या का वह भाग आता है जो या तो वैतनिक या अवैतनिक कार्यों पर नियुक्त हो। बाल मजदूर मुख्यतः दो क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

असंगठित क्षेत्र – होटल, ढाबा, फैक्ट्री, दुकान, वर्कशाप, हॉकर, कचरा चुनना, घर में नौकर का काम आदि।

संगठित क्षेत्र – कालीन बुनाई, दियासलाई आतिशबाजी, हथकरघा, चमड़ा, कांच, भवन निर्माण, रत्न उद्योग तथा ताला उद्योग आदि में बाल मजदूर ज्यादा पाये जाते हैं।

बालश्रम सम्बन्धी कानूनी प्रावधान

भारत में बालश्रम की समस्या कोई नई बात नहीं है। यह अंग्रेजों के जमाने से ही प्रचलित है। उस समय भी बच्चे खेतों में काम किया करते थे। इसीलिए उसी समय ब्रिटिश सरकार द्वारा राजकीय श्रम आयोग का गठन किया गया। वर्ष 1901 में बनाए अधिनियम में सरकार द्वारा 12 वर्ष से कम आयु के बच्चे

बालश्रम सम्बंधी प्रमुख अधिनियम

1901	खदान अधिनियम	1948	फैक्ट्री अधिनियम
1911	फैक्ट्री अधिनियम	1951	बाल रोजगार (संशोधित) अधिनियम
1923	भारतीय खाद्य अधिनियम	1951	बालश्रम अधिनियम
1926	फैक्ट्री संशोधित अधिनियम	1952	खदान अधिनियम
1931	भारतीय बंदरगाह अधिनियम (संशोधित)	1958	व्यापारिक जहाजरानी अधिनियम
1932	चाय बागान मजदूर अधिनियम	1961	मोटर ट्रांसपोर्ट मजदूर अधिनियम
1933	बाल बंधुआ श्रम अधिनियम	1966	बीड़ी और सिगार मजदूर अधिनियम
1934	फैक्ट्री अधिनियम	1978	बाल रोजगार अधिनियम (संशोधित)
1235	भारतीय खदान अधिनियम (संशोधित)	1986	बालश्रम (नियमन एवं उन्मूलन) अधिनियम
1938	बाल रोजगार अधिनियम		

को काम पर लगाना अपराध माना जाने लगा। प्रक्रिया आगे बढ़ी, 1922 में कारखाना एक्ट बना जिसमें 15 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति को बालक माना गया और उनके काम करने की अवधि 6 घंटे (आधा घंटा विश्राम) निश्चित की गई। स्वतंत्रता के बाद सरकार इस सम्बन्ध में जागरुक हुई और संविधान में कई संशोधनों के माध्यम से बच्चों को संरक्षण देने का प्रयास निरन्तर कर रही है। 2003 में 86वें संविधान संशोधन द्वारा 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान सरकार ने किया। संविधान में नागरिकों के मूलभूत अधिकारों में मुख्यतः अनुच्छेद 15(3) के द्वारा बालकों के लिए अलग से कानून बनाने का प्रावधान है। इसी तरह अनुच्छेद 23 के द्वारा बालकों के क्रय–विक्रय एवं उनके द्वारा अनैतिक कार्य कराने पर प्रतिबंध लगाने की बात संविधान में की गई है। अनुच्छेद 24 के द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, मिलों आदि में काम पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में भी बालश्रम पर रोक सम्बन्धी प्रावधान है। जैसे अनुच्छेद 39 (ई) में सरकार ने बच्चों के बचपन की रक्षा करने तथा किसी भी ऐसे कार्य से उन्हें बचाने का प्रयास किया है जो उनके स्वास्थ्य के लिए अनुचित हो। अनुच्छेद 39(एफ) में यह प्रावधान है कि राज्य ऐसी सुविधाओं का प्रावधान करेगा जिससे बच्चे स्वतन्त्रता और स्वाभिमान के साथ विकसित हों।

बाल मजदूर – काम को मजबूर

बाल श्रमिकों को आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए 1979 में 'गुरुपदस्वामी समिति' का गठन किया जिसने अपनी रिपोर्ट में बालश्रम का मुख्य कारण गरीबी माना है। विभिन्न समितियों के सुझावों के बाद सरकार ने बालश्रम उन्मूलन के लिए 1986 में एक विस्तृत अधिनियम 'बालश्रम निषेध एवं नियमन, अधिनियम 1986' बनाया जिसके माध्यम से 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को खतरनाक उद्योगों में तथा भारी उद्योगों में नहीं लगाया जा सकता। इन खतरनाक उद्योगों में डाक परिवहन स्टेशन के पास के प्रतिष्ठान,ज्वलनशील पदार्थ निर्माण, बीड़ी निर्माण उद्योग आदि को शामिल किया गया है। केन्द्र द्वारा बनाया गया 'राष्ट्रीय चार्टर 2003' बच्चों को अपने संवैधानिक अधिकारों के उपयोग पर अधिक बल देता है। इनमें बच्चों की खुशहाली के लिए समाज में जागरुकता लाने का प्रयास किया गया है। 1990 में राष्ट्रीय श्रमिक संस्थान में श्रम मंत्रालय और यूनीसेफ के सहयोग से बाल श्रमिकों के सम्बंध में अध्ययन, शिक्षण और प्रशिक्षण शोध परियोजनाएं आदि चलाने हेतु 'बाल श्रमिक सेल' की स्थापना की गई। सड़कों पर घूमकर अपनी जीविका चलाने वाले बच्चों के लिए भी 'राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग' द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत बालश्रमिकों की समस्याओं के निवारण सम्बन्धी प्रयास सराहनीय हैं। राष्ट्रीय मानवाधिकार की तर्ज पर देश में एक "राष्ट्रीय बाल आयोग" गठित किया गया है जो बच्चों के विकास सम्बंधी योजना बनाएगा। इस आयोग के अध्यक्ष सुप्रीम कोर्ट या हाईकोर्ट के न्यायाधीश होंगे। इसमें 6 सदस्य होंगे जो शिक्षाविद, बाल विशेषज्ञ, बाल देखरेख, बाल न्याय तथा बाल मनोविज्ञान आदि क्षेत्रों के विशेषज्ञ होंगे। औद्योगीकरण के इस दौर में बच्चे कुछ ही पैसों के लिए अपना जीवन बर्बाद कर रहे हैं। आज पर्यटन के नाम पर बच्चों को बाल वैश्यावृत्ति में भी फंसाया जा रहा है। इसी तरह की अनेक समस्याओं का निदान आयोग करेगा।

बच्चों की सुरक्षा और देखभाल के लिए ही संसद ने 'बाल न्याय अधिनियम 2000' पारित किया जिसने किशोर न्यायिक अधिनियम 1986 का स्थान लिया। इसमें किये गये प्रावधानों को बच्चों के अनुकूल बनाये जाने हेतु किशोर अपराधियों के नाम या फोटो प्रकाशित या प्रसारित करने वालों पर 25 हजार रुपये का दण्ड लगाने का प्रावधान है। विपत्ति में फंसे बच्चों को राहत पहुंचाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा निःशुल्क चाइल्ड लाइन फोन सेवा (1098) आरम्भ की गई है। इस नम्बर पर फोन करके बच्चे अपनी सहायता मांग सकते हैं। इस सेवा से आपदाग्रस्त बच्चों को आशा की एक नई किरण दिखाई दी है।

उपर्युक्त इन सभी प्रयासों से एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि देश के लाखों बच्चों को अपना अधिकार प्राप्त करने का मार्ग खुल गया है। इस सम्बन्ध में उपलब्ध आंकड़े यह बताते हैं कि वर्तमान में भारत सहित समूचे विश्व में इस बुराई को दूर करने के लिए प्रयास सफल रहे हैं और सकारात्मक प्रभाव

सामने आने हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा जारी रिपोर्ट (2005) के अनुसार विश्व स्तर पर पहली बार इस समस्या में कमी झलक रही है। रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 2000 से 2004 के बीच विश्व भर में बाल श्रमिकों की संख्या में 11 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई है। 5–17 आयु वर्ग के खतरनाक कार्यों में लगे बच्चों की संख्या में 26 प्रतिशत की कमी आई है। सरकार और गैर सरकारी संगठनों का प्रयास अगर इसी तरह से जारी रहा तो आने वाले दिनों में इस समस्या से निजात मिलने में देर नहीं है।

बालश्रम का प्रभाव

बालश्रम एक सामाजिक बुराई ही नहीं है बल्कि यह बच्चों को स्वास्थ्य की दृष्टि से भी प्रभावित करती है। कारखानों में काम करने वाले बच्चे अनेक प्रकार की बीमारियों का शिकार हो जाते हैं और उसके बाद पूंजीपति इन श्रमिकों को धक्का मारकर बाहर निकाल देते हैं। कारखानों में कार्यरत बच्चे तपेदिक जैसी भयंकर बीमारी का शिकार हो जाते हैं क्योंकि कारखानों में ईंट की दीवारों पर जो कालिख जमी रहती है जिसकी हवा प्रदूषित रहती है। वे भट्टियां 1400 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर जलती हैं। मिल मालिक आर्सेनिक और पोटैशियम जैसे खतरनाक रसायनों का प्रयोग करते हैं जो बच्चों के फेफड़ों पर सीधा असर डालता है। दिल्ली, तमिलनाडु, महाराष्ट्र के कारखानों से पता लगता है कि बड़ी संख्या में बाल श्रमिकों की दशा अत्यन्त शोचनीय है। वे जीवित कंकाल नजर आते हैं। शरीर में खाज – खुजली हो जाती है। निर्धन परिवार होने के कारण अनेक बच्चे स्कूल ही नहीं जा पाते । बालश्रम के कारण बच्चे अनेक बीमारियों (तपेदिक, आंख की बीमारी, अस्थमा, ब्रोनकाइटिस) से ग्रस्त हैं और कुछ कारखानों में होने वाली दुर्घटनाओं का शिकार हो जाते हैं। बाल मजदूरों का शारीरिक शोषण भी अधिक मात्रा में किया जाता है। सिर पर बोझा ढोने, ज्वलनशील भट्टियों में काम करने, कोई चीज खींचने के लिए अंतिम दम तक जोर लगाने, गंदे व बदबूदार कार्यों के

बच्चों के लिए संवैधानिक एवं कानूनी प्रावधान

1. संविधान का अनुच्छेद – 24	14 वर्ष की आयु से कम के बच्चे को किसी भी कारखाने, खान या अन्य खतरनाक व्यवसाय में लगाने पर प्रतिबन्ध।
2. संविधान का अनुच्छेद –(ड़)	सरकार द्वारा अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करना कि सुनिश्चित रूप से बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से मजबूर होकर उन्हें ऐसे रोजगार में न जाना पड़े जो उनकी आयु व शक्ति के अनुकूल न हों।
3.संविधान का अनुच्छेद –39(च)	सरकार द्वारा यह सुनिश्चित करना कि बालकों को स्वतन्त्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं उपलब्ध हों तथा बालकों की शोषण से रक्षा हों।
4. संविधान का अनुच्छेद –45	14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को सरकार द्वारा निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना।
5. संविधान का अनुच्छेद –21(क)	संविधान के 86वें संशोधन, 2002 के माध्यम से बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है।
6. भारतीय दण्ड संहिता धारा–82	7 वर्ष या इससें कम आयु के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है।
7. दण्ड प्रक्रिया संहिता धारा–125	सन्तान और साथ में बच्चे, चाहे वे वैध अथवा अवैध सन्तान हो, भरण– पोषण के भत्ते के हकदार।
8. संरक्षक एवं परिपाल्य अधिनियम	न्यायालय की संस्तुति पर अवयस्क के हित को ध्यान में रखते हुए उसकी या उसकी सम्पति 1890 अथवा दोनों के बारे में संरक्षक नियुक्त करने की व्यवस्था।
9. कारखाना अधिनियम,1948	बच्चों को अस्वस्थकर परिस्थितियों में श्रम पर लगाना प्रतिबन्धित।
10. शिशु अधिनियम, 1961 यथा–संशोधित –1978	बच्चों को श्रम साध्य या खतरनाक कार्यों में सेवायोजन पर प्रतिबन्ध।
11. किशोर न्याय अधिनियम – 1986	बच्चों के हित के लिए तथा उपेक्षित एवं अपचारी बच्चों की देखभाल, विकास तथा पुनर्वास के (यथा संशोधित –2000) साथ– साथ समुचित न्याय व्यवस्था करने हेतु प्राथमिक कानून।
12. राष्ट्रीय बाल आयोग (प्रस्तावित)	बच्चों के विकास और उनसे सम्बन्धित समस्याओं के सभी पहलुओं का अध्ययन और समस्याओं के निराकरण के लिए आवश्यक कदम उठाना।

कारण बच्चों की आयु एक तिहाई रह जाती है। खानों व खदानों में बच्चों को भेजने की प्राथमिकता है क्योंकि उसमें वयस्क घुस नहीं सकते और यही बच्चे जब बड़े होते हैं तो इनकी छंटनी कर दी जाती है। शोर करने वाली मशीनों से बच्चे प्रायः बहरे हो जाते हैं और धूल के कारण अनेक परेशानियां उठाते हैं।

बालश्रम सम्बंधी समस्या से निजात पाने के उपाय

वर्तमान में बालश्रम सम्बंधी समस्या एक वैश्विक समस्या के रूप में (खासकर पिछड़े देशों में) उभरकर सामने आ रही है। इस समस्या से निजात पाने के लिए सर्वसाधारण को खुले मन से प्रयत्न करना होगा और पूंजीपतियों पर अंकुश लगाना होगा तथा सरकार द्वारा बनाये गये कानूनों का सख्ती से पालन करना होगा। सर्वप्रथम तो यह जरूरी है की मजदूरी समाप्त नहीं होने की धारणा से निजात पाना होगा। बाल मजदूरी के कारणों में गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी और कम मजदूरी दर आदि प्रमुख हैं। इसलिए विभिन्न विभागों के सहयोग से कार्यक्रमों का सीधा लाभ बाल मजदूरों को दिलाने का प्रयास करना चाहिए जिससे उन परिवारों को वैकल्पिक आय का स्रोत मिल सके जो इन बाल मजदूरों की कमाई पर निर्भर हों। ऐसे गरीब परिवारों को स्वास्थ्य, पोषाहार, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से सस्ते कपड़े, मिट्टी का तेल आदि अन्य आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराई जाय जिससे उन परिवारों में मृत्युदर और जन्मदर कम हो और उनकी औसत आयु बढ़े।

बाल श्रमिकों को इस समस्या से मुक्त कराने के लिए उनके पुनर्वास की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए, पारम्परिक व्यवसायों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। व्यवसाय में लगे छोटे सदस्यों को प्रशिक्षण एवं स्थानीय ग्रामीण बैंकों से ऋण दिलवा कर उनकी स्थिति मजबूत करनी चाहिए। स्कूल के पाठ्यक्रमों में बालश्रम उन्मूलन सम्बन्धी अध्याय को शामिल किया जाना चाहिए। बाल श्रमिकों को शिक्षा भी दी जानी चाहिए। हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था बाल मजदूरों को बढ़ाने के लिए जिम्मेदार है। देश में स्कूलों का अभाव है और जहां हैं भी वह पहुंच से बाहर है। अगर गरीब बच्चे किसी तरह पढ़ लिख भी लिए तो उन्हें नौकरी नहीं मिलती है। ग्रामवासियों को यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि शिक्षा प्राप्त करना उनके लिए पैसे और समय दोनों की बर्बादी है। अतः रोजगारपरक शिक्षा ही बालश्रम पर अंकुश लगा सकती है।

सरकार बाल श्रमिकों के लिए निम्न प्रयास करें–

- सरकार द्वारा काम करने की स्थितियों में सुधार किया जाय।
- न्यूनतम मजदूरी, स्वास्थ्य और शिक्षा की व्यवस्था सरकार द्वारा की जाय।
- विकास कार्यक्रम योजना का लाभ बालश्रमिकों के परिवार को निर्धारित हो।
- असंगठित क्षेत्रों में बच्चों का संरक्षण किया जाय।
- बच्चों की रोटी, कपड़ा और मकान की अनिवार्य आवश्यकता सरकार द्वारा पूरी की जाय।
- बालश्रम कानून का उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड़ दिया जाय।
- बालश्रम के विरोध में जनजागरुकता फैलायी जानी चाहिए।
- बालश्रम सम्बंधी पाठ्यक्रम शिक्षा में शामिल किया जाय।

बालश्रम उन्मूलन के लिए 10वीं योजना में राष्ट्रीय बालश्रम परियोजना के अन्तर्गत कवर किये गये जिलों की संख्या 100 से बढ़कर 250 हो गई है। दोपहर का भोजन कार्यक्रम (मिड–डे–मील) से मिलने वाली खाद्य सुरक्षा का बाल श्रमिकों की संख्या को कम करने पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। सबको शिक्षा मुहैया कराने के उद्देश्य से शुरू किये गए सर्व शिक्षा अभियान से भी बच्चों के बीच साक्षरता बढ़ी है।

बालश्रम उन्मूलन के लिए सरकार ने एक राष्ट्रीय बालश्रम परियोजना तैयार की है। इसके अन्तर्गत कामकाजी बच्चों को कार्य से हटाकर विशेष स्कूलों में डाला जाएगा ताकि उन्हें औपचारिक शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ा जा सके।

भारत सरकार और अमेरिकी श्रम विभाग ने देश के 21 जिलों में बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिए इंडस (इंडो–यूएस) नाम की एक संयुक्त परियोजना आरम्भ की है। इसका लक्ष्य एक केन्द्रित और एकीकृत रूप से परियोजनागत क्षेत्र में जोखिमकारी उद्योगों में बालश्रम का पूरी तरह उन्मूलन करना है। इस योजना से 80,000 बच्चे लाभान्वित हो रहे हैं। बालश्रम एक्ट (संरक्षण एवं नियमन)1986 के अन्तर्गत खतरनाक समझे जाने वाले 64 उद्योगों में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को लगाने पर रोक है। अब यह घर और होटलों तक बढ़ा दिया गया है।

बालश्रम उन्मूलन अकेले सरकार की जिम्मेदारी नहीं है। वास्तव में यह एक ऐसा कार्यक्रम है जिसके लिए बालश्रम को एक सामाजिक और आर्थिक समस्या मानते हुए राष्ट्रीय अभियान चलाया जाना चाहिए। इस दिशा में परिवर्तनों के लिए हमें व्यापक नीतियां और कार्यक्रम तैयार करने होंगे और नीतियों का क्रियान्वयन ठीक ढंग से किया जाना चाहिए।

(लेखक बालश्रम उन्मूलन से संबंधित एनजीओ में अधिवक्ता हैं।)
ई–मेल : manish648@yahoo.co.in

लोक प्रशासन
(हिन्दी माध्यम)

By
Atul Lohiya
(A person who believes in scientific approach and hard work)

UGC-NET
QUALIFIED IN TWO SUBJECTS
(HISTORY & PUB. ADMINISTRATION)

लोक प्रशासन (हिन्दी माध्यम) में कम अंकों का भ्रम टूटा; क्योंकि हमारे छात्रों ने स्थापित किये सफलता के नये कीर्तिमान

UPSC-06 में सर्वोच्च अंक
विकास कुमार-353 (184/169)

नवीन शर्मा-332 (188/144) UPSC-2006
लाल बहादुर साहू-330 (177/153) UPSC-2006
अभिराम खरे-317 (164/153) UPSC-2006
रीतेश चौहान-334 (178/156) UPSC-2005 &
Selected in MPPSC

Abhishek Singh
Selected, UPSC-06

छत्तीसगढ़ पी.एस.सी. में 15 वीं रैंक पर हमारे संस्थान के दृष्टिहीन छात्र आशीष सिंह ठाकुर

हौसले से हार गई विकलांगता

Lokesh Lilhare Topper, UPSC-05 | Vineet Jain Topper, UPSC-05 | A.P.S. Yadav Topper, UPSC-04 | Virendra Kumar Essay+Interview (A.C.) | Arvind Kumar Topper, UPSC-03 | Tirthraj Agarwal SDM, 9th Rank, CG. | Shikha Rajput 31st Rank, CG. | Ranu Sahu (Dy. SP) 60th Rank, CG. | Prakash Chandra SDM Uttaranchal-02

MPPSC में अपार सफलता; यह श्रृंखला ज़ारी...

Ram M. Sahu | Aadesh Rai | Vivek K. Dubey | Sanjay K. Jain | Sanmati Kumar | Akhilesh K. Jain | Mukesh Singh | P. Agarwal | Abhiram Khare | Rajesh K. Yadav | Arvind Chouhan | Nimisha Jaiswal

आप भी प्राप्त कर सकते हैं 350+ अंक, कैसे? Winning Strategy के साथ

New Batch (Delhi): 21st Nov. & 5th Dec.
Admission Open from 10th November '07

New Batch (Allahabad): 1st week of Dec.
Admission Open from 21st November '07

केवल हम कराते हैं लोक प्रशासन का सम्पूर्ण एवं समग्र अध्ययन;
* *UPSC के साथ UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS की भी तैयारी;*

JOIN FOUNDATION COURSE

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध
(पूर्णतः संशोधित; परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)
MAINS - 3000/-
MAINS + PRE. - 4000/-
डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त
Send DD/MO in favour of 'Atul Lohiya'

लोक प्रशासन
Mains के साथ-साथ
Pre. के लिए भी बेहतर विकल्प

'अतुल लोहिया'
शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी

"PRABHA"
AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION
105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009
Phone : 27653498, 27655134, 32544250. Cell.: 9810651005 • e-mail: atulprabha@gmail.com
Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

KH-11/07/02

बाल श्रम : समस्या, कारण एवं दुष्प्रभाव

प्रोफेसर के.एम.मोदी

'बाल विश्व सम्मेलन' में तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष दिया गया है कि बाल श्रम के दृष्टिकोण से भारत की स्थिति दयनीय है। विश्व में बच्चों की सर्वाधिक संख्या वाले हमारे देश भारत के लिए यह निष्कर्ष चिन्ता व चिन्तन का विषय है। "बालक भविष्य की मानव संसाधन शक्ति है" यह तथ्य सर्वविदित होने के बावजूद भी ये भावी कर्णधार अपना बचपन भुलाकर श्रमिक के रूप में कार्य करने को विवश हैं। दुःख का विषय है कि तमाम कानूनी दांव पेंचों व सतत प्रयासों के बावजूद विश्व में लगभग 25 करोड़ बाल श्रमिक हैं जिनमें सर्वाधिक लगभग 10 करोड़ बाल श्रमिक अकेले भारत में हैं। ऐसा अनुमान है कि इन 10 करोड़ में से 7.5 करोड़ ग्रामीण क्षेत्रों में व 2.5 करोड़ शहरी क्षेत्रों में अपना श्रम बेचने को बाध्य हैं। यही नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने भी देश में व्याप्त इस भयावह समस्या की ओर संकेत करते हुए अनुमान व्यक्त किया है कि पूरे विश्व के लगभग एक चौथाई बाल श्रमिक भारत में कार्यरत हैं।

विभिन्न सर्वेक्षणों के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि देश में सर्वाधिक बाल–श्रमिक उत्तर प्रदेश में हैं जिनकी संख्या 19 लाख है। आंध्र प्रदेश में 14 लाख, राजस्थान में 13 लाख व बिहार में 10 लाख बाल मजदूरों का अनुमान लगाया गया है। हकीकत में, ये बाल श्रमिक एक प्रकार से गुलामी का जीवन जीने के लिये मजबूर हैं। स्पष्ट है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के छः दशक बीत जाने के उपरांत भी देश में बाल–श्रम एक ज्वलन्त, सामाजिक व आर्थिक समस्या बनी हुई है।

भारतीय संविधान के अनुसार 9 से 14 वर्ष के बालक/बालिका, जो वैतनिक श्रम करते हैं अथवा श्रम द्वारा पारिवारिक कर्ज चुकाते हैं, बाल श्रमिक की श्रेणी में शामिल हैं। बाल श्रम के उन्मूलन हेतु भारतीय संविधान की धारा 24 में स्पष्ट प्रावधान है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी कारखाना, खान या जोखिम भरे काम में नहीं लगाया जा सकता है। इसी भांति, बाल श्रम (प्रतिरोध एवं विनियम) अधिनियम 1986 में पचास ऐसे क्षेत्रों को निर्दिष्ट किया गया है जिनमें बालकों से काम कराना गैर कानूनी है। राष्ट्रीय श्रम नीति 1987 में बाल श्रमिकों को शोषण से मुक्त करवाने व उनकी शिक्षा, विकास एवं मनोरंजन की व्यवस्था करने पर बल दिया गया है। भारत सरकार द्वारा स्थापित बाल मजदूरी उन्मूलन प्राधिकरण भी बाल श्रम की प्रथा को रोकने व उनके शिक्षा व विकास हेतु प्रयासरत है। हाल ही में, सरकार ने 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को घरों, ढाबों, रेस्टोरेन्ट, होटलों, चाय की दुकानों, रिसोर्टो, हैल्थ–क्लबों, मनोरंजन केन्द्रों तथा अन्य हानिकारक कार्यों के लिए नौकर रखे जाने पर रोक लगाई है। इस अधिनियम का उल्लघंन करने के दोषी को तीन माह से लेकर एक साल की कैद और 20 हजार रुपये जुर्माना लगाये जाने का प्रावधान है।

इस प्रकार भारतीय संविधान एवं न्यायालय ने समय–समय पर बाल श्रम के उन्मूलन व हितार्थ अनेक कानून, अधिनियम व प्राधिकरण गठित किये। लेकिन चिन्ता का बिन्दु यह है कि इन सब प्रयत्नों व कानूनी कार्यवाहियों के बावजूद भी बाल श्रम की जटिल समस्या यथावत बनी हुई है। हम अपने चारों तरफ बाल श्रमिकों को विभिन्न कार्यों को सम्पादित करते हुये देख सकते हैं। ढाबे, होटलों व चाय की थड़ियों पर इन बच्चों को विभिन्न काम करते हुए देखा जा सकता है। कभी जूठे प्याले धोते हैं, कभी ग्राहक को चाय, पानी या रस पहुंचाते हैं तो कभी मेज वगैरह साफ करते दिखाई देते हैं, कभी टायरों की दुकान पर पंचर निकालते देखे जा सकते हैं। यही नहीं, हर गली व मौहल्ले में ये अबोध बच्चे बर्तन साफ करते, कपड़ों की धुलाई करते या सफाई करते हुए देखे जा सकते हैं। ऐसा अनुमान व्यक्त किया गया है कि दिल्ली जैसे शहर में लगभग पचास हजार बच्चे घोर अभाव की स्थिति से गुजर रहे हैं जिनके पास अपने श्रम को बेचने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं है।

आज जिन बच्चों के हाथों में 'कलम एवं दवात' होनी चाहिए, वे बच्चे अपने परिवारों की रोटी व कपड़ा जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बीड़ी उद्योग, गलीचा उद्योग, माचिस व आतिशबाजी उद्योग, रंगाई–छपाई उद्योग, ईंट उद्योग, खनन व निर्माण कार्यों में अपना बचपन बेचते देखे जा सकते हैं। दियासलाई, पटाखा व कांच जैसे खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों के जीवन पर सदैव खतरे के बादल मंडराते रहते हैं। वे तरह–तरह की घातक बीमारियों से ग्रसित होते हैं। इस तरह, पत्थर व खनन उद्योग में संलग्न बाल श्रमिकों को अस्थमा व श्वास संबंधित रोग होने का भय हमेशा बना रहता है। ताला व पीतल उद्योग से आजीविका अर्जन करने वाले बाल श्रमिक दमा, सिरदर्द, माईग्रेन व क्षय रोग जैसी घातक बीमारियों से ग्रस्त पाये जाते हैं। अतंर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बीस देशों का सर्वेक्षण करके यह तथ्य

उजागर किया है कि करीब 70 प्रतिशत श्रमजीवी बच्चे गंभीर जोखिमों को सामना करते हैं। कार्यों के दौरान इन बाल श्रमिकों को गंभीर चोटें लगती हैं एवं अनेक रोगों से पीड़ित हो जाते हैं जिनमें त्वचा, आंख, फेफड़ें, श्वास संबंधित रोग मुख्य हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा उद्घाटित ये तथ्य बाल श्रमिकों की कारूणिक व्यथा व शारीरिक पीड़ा का वास्तविक चित्रण करते हैं।

ऐसा अनुमान है कि राजस्थान, गुजरात व जम्मू कश्मीर में अवस्थित गलीचा उद्योगों में 90 प्रतिशत मजदूर बालक ही होते हैं क्योंकि बच्चों की कोमल अंगुलियों से गलीचा बुनाई का काम शीघ्र व उत्तम होता है। कालीन उद्योग में कार्यशील बच्चे धूल व रेशों के कारण फेफड़ों, गठिया व जोड़ों के दर्द जैसी बीमारियों के शिकार पाये जाते हैं। गत वर्षों में जर्मनी एवं अमेरिका के दबाव से गलीचा उद्योग में बाल श्रमिकों की स्थिति में सुधार का प्रयास किया गया किन्तु सामाजिक एवं राजनैतिक जागरुकता के अभाव में यह उद्योग फिर अपनी पुरानी राहों पर आ गया। यही नहीं, बाल श्रमिक जिन स्थानों पर कार्य करते हैं वहां भी उनके जीवन की सुरक्षा के लिए विशेष प्रावधान नहीं किया जाता है। बाल श्रमिकों के जीवन सुरक्षा के प्रति बरती जा रही लापरवाही के कारण प्रतिवर्ष 22 हजार बाल श्रमिकों को कार्यस्थल पर घटित दुर्घटना के कारण अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ता है।

बाल श्रमिकों से संबंधित भयावह पहलू यह भी है कि बाल श्रमिकों के साथ न केवल दुर्व्यवहार किया जाता है अपितु अधिकाधिक काम करवाने के लिए उनको कई बार शारीरिक एवं मानसिक यंत्रणाएं दी जाती है एवं मारपीट भी की जाती है। कई बार तो स्थिति इससे भी बदतर हो जाती है जब बाल श्रमिकों के साथ यौन दुराचार जैसे अनैतिक कृत्य भी किये जाते हैं या इनसे करवाये जाते हैं। ऐसा अनुमान है कि पांच लाख बच्चियां वैश्यावृत्ति उद्योग में लिप्त है जो एचआईवी तथा एड्स जैसे घातक रोगों का शिकार बन जाती है। यही नहीं, यूनाइटेड नेशन्स् डेवलपमेंट प्रोग्राम के एक सर्वेक्षण के अनुसार ये विवश बच्चे नशीले पदार्थों की तस्करी में भी संलग्न हो जाते हैं। स्थिति और भी गंभीर हो जाती है जब इस काले धंधे में लिप्त बच्चों में से 75 प्रतिशत बच्चे स्वयं इन नशीले पदार्थों के सेवन के आदी हो जाते हैं तथा जीवन नष्ट कर बैठते हैं।

बाल श्रमिकों के नैसर्गिक, मानसिक व शारीरिक विकास अवरूद्ध होने से देश के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा क्योंकि बच्चे किसी भी देश के भावी नागरिक व मानव संसाधन हैं। प्रतिदिन 10 से 12 घंटे काम के बोझ तले दबे बाल श्रमिक शिक्षा से वंचित रह जाते हैं जिससे उनका बौद्धिक विकास भी कुंठित हो जाता है। बौद्धिक व मानसिक विकास के अभाव में ये बालक आजीवन मजदूर ही बने रहते हैं तथा गरीबी व कुपोषण का जीवन जीने को विवश रहते हैं। इन सब कारणों से इनमें नैराश्य व कुंठा की भावना घर कर जाती है जो हिंसा, बलात्कार, आतंकवाद, लूट–पाट जैसी असामाजिक घटनाओं को जन्म देती है। बाल श्रम की समस्या के लिए गरीबी, बेरोजगारी, बढ़ती जनसंख्या व निरक्षरता मुख्यतया जिम्मेदार है। श्रम व रोजगार मंत्रालय ने भी अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट किया है कि बाल श्रम की समस्या के लिए निर्धनता व निरक्षरता मुख्य रूप से उत्तरदायी है। परिवार की गरीबी व परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण बालकों को भी मजदूरी पर लगाना अभिभावकों की विवशता बन जाती है ताकि येन केन प्रकारेण परिवार का गुजर बसर हो सके। इस प्रकार ये बच्चे आर्थिक दशा को सुधारने का विफल प्रयास करते हैं। विडम्बना यह है कि एक तरफ तो पैसे कमाने के लिए ये बच्चे शोषण का शिकार होते हैं तो दूसरी तरफ इनके माता–पिता या अभिभावक खुश होते हैं कि उनके बच्चे बचपन से ही कमाऊपूत बन गये हैं।

'बाल विश्व सम्मेलन' में भी बाल श्रम जैसी ज्वलन्त समस्या के लिए गरीबी को जिम्मेदार ठहराते हुए कहा गया है कि विकासशील देशों के 50 प्रतिशत लोगों की आमदनी एक डालर प्रतिदिन से कम है। अतः इस वर्ग के लिए बालक को काम पर लगाना विवशता बन जाती है। गौरतलब है कि संगठित क्षेत्र में रोजगार अवसरों की सीमितता के कारण गरीब व कम पढ़ा लिखा वर्ग असंगठित क्षेत्र में ही रोजगार करने को बाध्य है। यह असंगठित क्षेत्र न्यूनतम मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा व वर्ष पर्यन्त रोजगार गारन्टी जैसे प्रावधानों से सर्वथा अछूता है। अतः असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत श्रमिकों के लिए आय निम्न होने के कारण बच्चों की शिक्षा पर व्यय करना संभव नहीं है व घर खर्चा चलाने के लिए बच्चों से मजदूरी करवाना विवशता है। बाल विश्व सम्मेलन में यह निष्कर्ष भी उभरकर समक्ष आया कि अशिक्षा भी बाल श्रम को बढ़ावा देती है। अशिक्षित माता–पिता शिक्षा का महत्व नहीं समझ पाते हैं व तत्कालीन तुच्छ लाभों के लिए बच्चों को काम पर लगाकर अपने कर्त्तव्यों की इतिश्री समझ लेते हैं। निरक्षरता की वजह से माता–पिता या अभिभावक न तो बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित कर पाते हैं और न ही बच्चों के अध्ययन से संबंधित कठिनाइयों व समस्याओं का निराकरण ही कर पाते हैं। विद्यालय का भयप्रद व नीरस वातावरण, विद्यालय में आधारभूत सुविधाओं की कमी, अध्ययन के प्रति बच्चों की अरुचि व बालिकाओं के द्वारा गृहकार्यों में मदद व कम उम्र में शादी जैसे कारण भी उन्हें बीच में ही स्कूल छोड़ने को बाध्य करते हैं। ये बीच में ही विद्यालय को छोड़ देने वाले या न पढ़ने वाले बच्चे बाल श्रमिक के रूप में अपने परिवार के लिए कमाऊपूत बन जाते हैं।

बाल श्रमिकों की बढ़ती फौज न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कलंक है अपितु भावी विकास मार्ग के अवरोधक है। देश

के इस बहुमूल्य मानव संसाधन के सामाजिक–आर्थिक विकास के बिना विकास की कल्पना अधूरी है। अतः इस समस्या के निवारणार्थ ठोस व प्रभावी कार्य योजना की क्रियान्विति के साथ सक्रिय जन सहयोग व सहभागिता भी अपेक्षित है। सर्वप्रथम हमें इस तथ्य पर गौर करना होगा कि यदि बाल श्रमिकों को श्रम बंधन से विमुक्त कर दिया जाये तो उनके व उनके परिवार के भरण पोषण की वैकल्पिक व्यवस्था क्या होगी?

इनके साथ ही मुक्त कराये गये बच्चों की 'सर्वशिक्षा अभियान' कार्यक्रम के तहत शिक्षा व्यवस्था की जानी चाहिए। ये कार्यक्रम उनको पढ़ने के लिए प्रेरित करने के साथ उनके दोपहर भोजन की व्यवस्था भी करते हैं।

जब तक बाल श्रमिक परिवारों के जीवन–यापन हेतु वैकल्पिक रोजगार व्यवस्था का पुख्ता प्रबंधन नहीं किया जाता है, तब तक इस समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं है, कानूनों व अधिनियमों का प्रभावी क्रियान्वयन भी संदिग्ध है। गरीबी व बाल श्रम का 'चोली–दामन' का संबंध हैं, हमें इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुये गरीबी को दूर करने के लिए ग्रामीण रोजगार गारन्टी जैसे कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक व कठोर कदम उठाने की सख्त जरूरत है। साथ ही हमें यह भी देखना होगा कि काम की दशाओं व वातावरण में सुधार हो, असंगठित क्षेत्रों में भी न्यूनतम मजदूरी का भुगतान हो, रोजगार की गारन्टी हो ताकि इन क्षेत्रों में कार्यरत श्रमिकों को अपने बच्चों से काम करवाने के लिए विवश ना होना पड़े। बाल श्रम उन्मूलन संबंधित कानूनों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए निगरानी समितियों को अधिक अधिकार संपन्न व जवाबदेह बनाया जाना चाहिए। 'बच्चा देश का भावी कर्णधार है' इस बात को मद्देनजर रखते हुए इस विश्वव्यापी समस्या के समाधान हेतु स्वयंसेवी संगठनों व समाज के सभी नागरिकों का सक्रिय सहयोग व भागीदारी अपेक्षित है।

इसके अतिरिक्त, जो बच्चे अनाथ, परित्यक्त या विकलांग हैं, उनके पुनर्वास के लिए विशेष प्रावधान किये जाने आवश्यक है। बालगृहों की व्यवस्था के साथ ही उनके भोजन का इंतजाम भी प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए। अतः गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा व जनसंख्या विस्फोट आदि मूलभूत कारणों पर एक साथ कड़ा प्रहार करके ही इस समस्या को समूल नष्ट किया जाना संभव है। इसके साथ ही, बाल श्रमिकों के प्रति मानवीय संवेदना व सहानुभूति का वातावरण पैदा किया जाना आवश्यक है। जब भी बाल श्रम का कोई प्रकरण प्रकाश में आए तो उसकी घोर भर्त्सना की जानी चाहिए। बाल श्रम जैसी जटिल व भयावह समस्या के समाधान हेतु सरकार, स्वयंसेवी संगठनों व समाज की सहभागिता, सक्रियता व संवेदना नितान्त जरूरी है। कई अन्तर्राष्ट्रीय बाल संस्थाएं भी स्वयंसेवी संगठनों के माध्यम से बच्चों की सुरक्षा, शिक्षा व पुनर्वास की सुविधाएं प्रदान कर रही है। इन अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करके इस जटिल समस्या के समाधान में उनका सहयोग भी लिया जाना संभव है।

(लेखक पीजी कालेज में व्यावसायिक प्रशासन के विभागाध्यक्ष हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर *निदेशक, प्रकाशन विभाग* को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

बालश्रम उन्मूलन हेतु सरकारी एवं गैर-सरकारी प्रयास

डॉ. सुशील कुमार गौतम

बच्चे हमारे देश का भविष्य हैं और उनका समुचित, भौतिक, मानसिक एवं शैक्षिक विकास हम सब का दायित्व है। वर्तमान समय में जहां एक ओर हम वैश्वीकरण एवं उदारीकरण की बात करते हैं वहीं इसके दुष्परिणामों को भी देख कर अनदेखा कर देते हैं। तीव्र व्यापारिक प्रतिस्पर्धा में प्रत्येक औद्योगिक प्रतिष्ठान अधिकतम लाभ अर्जित करना चाहता है। चाहे इसके लिए उसे जनता जनार्दन के हितों को ही क्यों न ताक पर रखना पड़े। इसके लिए वह ऐसे साधनों का प्रयोग करना चाहता है जिससे उसकी उत्पादन लागत कम से कम आये ताकि उसके द्वारा उत्पादित वस्तु राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार प्रतिस्पर्धा में टिकी रहे। इसके लिए वह सस्ते श्रम का प्रयोग करता है। जिसमें वह बाल श्रमिकों का सहारा लेता है क्योंकि एक वयस्क श्रमिक को दी जाने वाली मजदूरी में दो से तीन बाल श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान किया जा सकता है। साथ ही इसका दूसरा प्रमुख कारण व्यक्तियों की मनोवृति है। एक साधारण व्यक्ति की सोच होती है कि वह अधिकतम बच्चे पैदा करे क्योंकि अधिक हाथ अधिक कमाई, परंतु ऐसा होता नहीं क्योंकि वह व्यक्ति अधिक बच्चों का अच्छी तरह भरण पोषण नहीं कर पाता और बच्चों को भी काम पर लगा देता है और यह है बाल श्रम का दूसरा कारण। एक अन्य कारण में यह धारणा है कि कुछ व्यवसाय ऐसे हैं जहां बच्चे ही कुशलतापूर्वक काम कर सकते हैं इसके लिए कालीन उद्योग को प्रमुख माना जाता है। चूंकि बाल श्रम को गरीबी का एक प्रमुख कारण माना जाता है। परंतु उपर्युक्त कारणों में कहीं भी गरीबी बाल श्रम का कारण नहीं है। परंतु फिर भी इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि गरीबी से भी बाल श्रम बढ़ता है। बाल श्रम मात्र लोगों की मानसिकता का ही एक परिणाम है।

वर्तमान भारतीय समाज में बहुत ही अधिक बच्चे आर्थिक गतिविधियों में लगे हैं। जैसे घरेलू कार्य, पारिवारिक उपक्रम या खेतों में ये बच्चे मजदूरी लिए और बगैर मजदूरी लिये दोनों प्रकार से काम करते हैं। यह आवश्यक है कि बच्चों द्वारा किये जाने वाले इस प्रकार के कार्यों पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा कर उन्हें ऐसे कार्य दिए जाएं जिनमें बचपन की गतिविधियों के साथ तालमेल हो। जब बच्चों को ऐसे कार्य दिये जाते हैं जहां उन्हें सामाजिक, शैक्षिक भूमिका की उपेक्षा कर दी जाती है तब ये कार्य उनके लिए बोझ और गंभीर खतरे पैदा करने वाले बन जाते हैं। ऐसे मामलों में कार्य प्रधान हो जाता है और इसका बच्चों पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। इससे बच्चों के स्वस्थ विकास एवं उनके भविष्य पर खतरा मंडराने लगता है। इस मामले में बच्चों द्वारा किये जाने वाले कार्य शोषणकारी और बुराई बनकर रह जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो यदि कोई बच्चा ऐसे कार्य करता है जिससे उसके खेलने कूदने और पढ़ाई लिखाई में बाधा पहुंचती है एवं उनका मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास रुक जाता है उसे बाल श्रम कहते हैं। मौजूदा रूप में यदि हम व्यापक संदर्भ लें तो बाल श्रम की कई परिभाषाएं हैं जो बाल श्रम के उद्देश्यों पर निर्भर करती हैं। बाल श्रम या बाल कार्य की परिभाषा चाहे जो भी हो परंतु इतना तो स्पष्ट है कि भारत में बाल श्रमिकों की संख्या बहुत अधिक है और बाल श्रम का मुद्दा भारत के लिये गंभीर विषय है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 24 के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु का प्रत्येक व्यक्ति बालक है। यही उक्ति बाल श्रम प्रतिषेय एवं विनियमन अधिनियम 1986 की है। आंध्र प्रदेश सरकार का मानना है कि जो बच्चा स्कूल नहीं जाता वह बाल श्रमिक है। आईएलओ के अनुसार वे बच्चे बाल श्रमिक कहलाते हैं जो स्थाई रूप से प्रौढ़ों जैसी जिंदगी जीते हैं। लंबे समय तक कम वेतन पर ऐसी परिस्थितियों में काम करते हैं जो उनके मानसिक व शारीरिक विकास में बाधक होती है। समाज विज्ञान कोष के अनुसार अपने व अपने परिवार के

तालिका–1 भारत के प्रमुख राज्यों में बाल श्रम की स्थिति

राज्य	प्रतिशत
उत्तर प्रदेश	15.31
आंध्र प्रदेश	10.83
राजस्थान	10.03
बिहार	8.87
मध्य प्रदेश	8.46
पश्चिमी बंगाल	6.81
कर्नाटक	6.53
महाराष्ट्र	6.07
गुजरात	3.85
तामिलनाडु	3.33
उड़ीसा	3.00

तालिका–2 भारत के प्रमुख राज्यों में बाल श्रम की सघनता

क्र.सं.	राज्य/संघ शासित क्षेत्र का नाम	1971	1981	1991	2001
1.	आंध्र प्रदेश	1627492	1951312	1661940	1363339
2.	असम	239349	**	32759	351416
3.	बिहार	1059359	1101764	942245	1117500
4.	छत्तीसगढ़	–	–	–	364572
5.	गुजरात	518061	616913	523585	485530
6.	हरियाणा	137826	194189	109691	253491
7.	हिमाचल प्रदेश	71384	99624	56438	107774
8.	जम्मू और कश्मीर	70489	258437	**	175630
9.	झारखंड	–	–	–	407200
10.	कर्नाटक	808719	1131530	976247	822615
11.	केरल	111801	92854	34800	26156
12.	मध्य प्रदेश	1112319	1698597	1352563	1065259
13.	महाराष्ट्र	988357	1557756	1068418	764075
14.	मणिपुर	16380	20217	16493	**
15.	मेघालय	30440	44916	34633	53940
16.	नागालैंड	13726	16235	16467	**
17.	उड़ीसा	492477	702293	452394	377594
18.	पंजाब	232774	216939	142858	177268
19.	राजस्थान	587389	819605	774199	1262570
20.	सिक्किम	15661	8561	5598	16457
21.	तमिलनाडु	713305	975055	578889	418801
22.	त्रिपुरा	17490	24204	16478	21576
23.	उत्तर प्रदेश	1326726	1434675	1410086	1927997
24.	उत्तरांचल	–	–	–	70183
25.	पश्चिमी बंगाल	511443	605263	711691	857087
26.	अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	572	1309	1265	1960
27.	अरूणाचल प्रदेश	17925	17950	12395	18482
28.	चंडीगढ़	1086	1986	1870	3779
29.	दिल्ली	17120	25717	27351	41899
30.	दमन एवं द्वीप	7391	9378	941	729
31.	गोवा	–	–	4656	4138
32.	लक्षद्वीप	97	56	34	27
33.	मिजोरम	***	6314	16411	26265
34.	पांडिचेरी	3725	3606	2680	1904
	योग	**10753985**	**13640870**	**11285349**	**12666377**

टिप्पणी : ** जनगणना नहीं की जा सकी।

*** 1971 की जनगणना आंकड़ों में मिजोरम के आंकड़े असम प्रदेश के अंतर्गत दिखाए गए हैं। 1991 एवं 2001 के आंकड़े 5 से 14 आयु वर्ग के बाल श्रमिकों से संबंधित है।

भरण पोषण के लिए किये जाने वाले कार्य शारीरिक विकास में रुकावट पैदा करते हैं। जब बालक शिक्षा से भी वंचित रह जाता है तो वह बाल श्रमिक की श्रेणी में आ जाता है। भारत में बाल श्रमिकों की यह संख्या 12666377 से भी अधिक है।

भारत में बाल जनसंख्या का वितरण 4 भागों में किया जाता है। यह क्रम सबसे अधिक से शुरू होकर नीचे की ओर जाता है।

- पूर्णकालिक विद्यार्थी के रूप में।
- ना काम करते हैं ना स्कूल जाते हैं।
- पूर्णकालिक बाल श्रमिक।
- सीमान्त बाल श्रमिक।

बालश्रम के दुष्परिणाम

किसी भी देश में बालश्रम के दुष्परिणाम प्रत्येक पहलू को प्रभावित करते हैं जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है–

वयस्क व्यक्तियों के रोजगार की समस्या

बालश्रम का सबसे प्रमुख दुष्परिणाम वहां के वयस्क श्रम पर पड़ता है। उद्यमियों को सस्ता बाल श्रम उपलब्ध होने के कारण वह वयस्क श्रमिकों की मांग नहीं करते क्योंकि बाल श्रमिक उन्हें 5 से 25 रुपये प्रति श्रमिक की दर से प्राप्त हो जाते हैं वहीं वयस्क श्रमिक के लिए 50 से 120 रुपये तक देना होता है।

बाल मृत्यु दर में वृद्धि

बाल श्रम का दुष्परिणाम बाल मृत्यु दर को भी प्रभावित करता है। जिन स्थानों पर यह बच्चे कार्य कर रहे होते हैं वहां का वातावरण स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं होता। गैसों व केमीकल्स के दुष्प्रभाव से इन नौनिहालों को नाना प्रकार की बीमारियां घेर लेती हैं जो जानलेवा होती हैं।

साक्षरता दर में गिरावट

बाल श्रम का दुष्परिणाम किसी भी देश की साक्षरता दर को प्रभावित करता है। बच्चों के माता–पिता चंद रुपयों के लालच में अपने बच्चों को कार्य पर लगा देते हैं। जिसके कारण वह स्कूल से वंचित रह जाते हैं और वह जीवन भर निरक्षर बना रहता है जिससे देश के साक्षरता प्रतिशत में गिरावट दर्ज होने लगती है।

न्यूनतम मजदूरी कानून का उल्लंघन

जिन राष्ट्रों में बाल श्रम की बहुलता है ऐसे राष्ट्रों में न्यूनतम मजदूरी कानून का घोर उल्लंघन हो रहा है। वर्तमान में जहां 2600 रुपये मजदूरी है वहां प्रति बाल श्रमिक अधिकतम 700 रुपये दिया जाता है। बाल मजदूर का कोई लिखित रिकार्ड नहीं रखा जाता इसलिये सरकार भी ऐसे नियोजकों (बाल श्रमिकों से कार्य कराते हैं) पर प्रतिबंध/दण्डात्मक कार्यवाही करने में सफल नहीं हो पाती।

बाल श्रमिक परिवारों में गरीबी की अधिकता

ऐसे परिवार जहां बाल श्रमिक कार्य करते हैं उन परिवारों में सदैव गरीबी बनी रहती है। बचपन से जो बालक कार्य करना प्रारंभ करता है वह कभी भी कुशल एवं प्रशिक्षित कारीगर नहीं बन पाता। फलतः वह निम्नतम मजदूरी पर बंधुआ मजदूर के रूप में कार्य करता रहता है। उसकी कार्य अकुशलता के चलते उसे अन्यत्र कार्य मिलने में परेशानी रहती है। वह सदैव उसी उपक्रम में लगा रहता है। जिसके चलते उसकी कम मजदूरी में उसके परिवार का खर्च नहीं चल पाता और वह अपने बच्चों को भी कार्य पर लगा देता है जिससे बाल श्रम एवं गरीबी दोनों बने रहते हैं।

श्रम संगठनों की निष्क्रियता

बाल श्रम का एक महत्वपूर्ण दुष्परिणाम यह है कि श्रम संगठन जो श्रमिकों के हित में कार्य करते हैं वह बाल श्रम के चलते निष्क्रिय रहते हैं क्योंकि श्रम संगठनों की महत्ता उसी समय सक्रिय होती है जब प्रशिक्षित श्रमिक हो एवं उद्यम में नियोजक द्वारा उसका पंजीकरण हो कि वह अमुक उद्यम में कार्यरत हैं।

सर्वशिक्षा अभियान के सफल क्रियान्वयन में बाधक

बाल श्रम सर्वशिक्षा अभियान के सफल क्रियान्वयन में बाधक है। सरकार द्वारा करोड़ों रुपये की परियोजना बाल श्रम के चलते अपना कार्य पूर्ण रूप से नहीं कर पा रही है। ऐसे बालक जो सुबह से काम पर चले जाते हैं तथा ऐसी जगहों पर कार्य करते हैं जहां पर सूर्य का प्रकाश भी नहीं पहुंच पाता ऐसी स्थिति में उन्हें सर्वशिक्षा अभियान में लाना अत्यंत दुर्लभ कार्य है। हालांकि राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना एवं इण्डस बाल श्रम परियोजना द्वारा बाल श्रमिक विद्यालय कार्य कर रहे हैं परंतु इन विद्यालयों को भी अभी शत प्रतिशत सफलता नहीं मिल रही है क्योंकि ऐसे विद्यालयों की संख्या बाल श्रमिकों के अनुपात में काफी कम है।

पूंजी का केंद्रीयकरण

प्राचीन समय में कुछ निश्चित नियोजकों के हाथों में पूंजी का केंद्रीयकरण था परंतु आजादी के बाद पूंजी का केंद्रीयकरण विखण्डित हो गया क्योंकि बंधुआ मजदूरी को सरकार द्वारा समाप्त कर दिया गया और बंधुआ मजदूर निषेध कानून लाकर इसको निषेध घोषित किया गया एवं इसी प्रकार बाल श्रम को भी 1986 में निषिद्ध किया गया। परंतु वर्तमान में बाल श्रमिकों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है जिससे नियोजकों को सस्ता श्रम मिल रहा है और वह दिनोंदिन पूंजीपति होता जा रहा है और मजदूर वर्ग निर्धन हो रहा है।

देश की आर्थिक प्रगति में बाधक

जिस देश में बाल श्रम की अधिकता होगी उस देश की आर्थिक प्रगति एवं आर्थिक विकास उतना ही धीमी गति से होगा। बाल श्रमिकों द्वारा तैयार उत्पादन निम्न श्रेणी का होता है जिसके चलते वह सस्ता बिकता है। कुछ देशों द्वारा तो यह प्रतिबंध लगाया हुआ है कि जिन राष्ट्रों में उत्पादन के लिये बाल श्रमिकों का प्रयोग किया जाता है वह उस देश में निर्मित वस्तुओं को नहीं

खरीदते। जिससे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का पतन होता है एवं उस देश का आर्थिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।

शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधक

बाल श्रम बालकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधा पहुंचाता है। जो बच्चे श्रम करते हैं उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास ऐसे बच्चों की अपेक्षा जो श्रम नहीं करते रुक जाता है एवं तरह तरह की बीमारियां उनके शरीर में पनपने लगती हैं। बाल श्रम के उपर्युक्त प्रमुख दुष्परिणाम हैं परंतु इनके अतिरिक्त भी बहुत सारे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दुष्परिणाम है।

बाल श्रम पर काबू पाने के लिए रणनीतियां

बाल श्रमिकों को काम से हटाना

- श्रम विभाग, पुलिस विभाग, राजस्व प्राधिकारियों, कारखानों और औद्योगिक विभागों के माध्यम से बाल श्रम कानूनों का प्रवर्तन।
- बाल श्रम के कुप्रभावों और स्कूली शिक्षा के सकारात्मक प्रभावों का जागरुकता सृजन कार्यक्रम।
- अनिवार्य स्कूली शिक्षा और बाल श्रम हटाने पर संदेश फैलाने के लिए सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करना।
- कामकाजी बच्चों की पहचान करने और उन्हें काम से हटाने तथा स्कूलों में दाखिल कराने के लिए प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करके प्रशिक्षक तैयार करना।
- बाल श्रम के मुद्दों पर अंतःविभागीय समन्वयन सृजित करना।
- बाल श्रम के मुद्दों पर ट्रेड यूनियनों को संवेदनशील बनाना।
- बाल श्रम कार्यक्रमों में यूनिसेफ, यूएनडीपी, आईएलओ, एक्शन एड आदि जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को शामिल करना।

बाल श्रमिकों का पुनर्वास

- भारत सरकार की वित्तीय सहायता से चलाई जा रही राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना के अंतर्गत 4000 स्कूलों के माध्यम से बाल श्रमिकों का पुनर्वास। बच्चों को पोषाहार, पुस्तकें, व्यवसायिक प्रशिक्षण आदि प्रदान करना।
- महिला सहकारी वित्त निगम द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली समेकित बालिका श्रम परियोजना योजना के माध्यम से बालिका श्रमिकों का पुनर्वास।
- समाज कल्याण विभाग द्वारा "बैक टु स्कूल" कार्यक्रम के अंतर्गत और जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के माध्यम से बच्चों का पुनर्वास।
- श्रम मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा चलाई जाने वाली सहायता–अनुदान योजना के अंतर्गत गैर–सरकारी संगठनों के माध्यम से बाल श्रमिकों का पुनर्वास।

शत–प्रतिशत ड्राप–आउट बच्चों को दाखिल करने की रणनीतियां

100 प्रतिशत दाखिले का लक्ष्य प्राप्त करने और 8 से 14 वर्ष के आयु समूह के बाल श्रमिकों को शिक्षा की मुख्यधारा में लाने के लिए कार्यक्रम लागू करने हेतु निम्नलिखित रणनीतियों की योजना बनाई गई है।

- स्वैच्छिक रूप से अपनी सेवायें प्रदान करने के इच्छुक व्यक्तियों और संस्थानों को अधिक संख्या में लाकर जिला स्तरीय समितियों को सुदृढ़ बनाना।
- बस्ती के स्तर और ब्लॉक स्तर पर कोर समितियों का गठन करना। स्कूलों में बाल श्रमिकों की पहल करने, उन्हें अभिप्रेरित करने और स्कूल में दाखिल करने के लिए प्रत्येक ब्लॉक स्तरीय अधिकारी और सेवा इकाई को एक बस्ती अपनाना। सभी विकासात्मक विभागों, गैर–सरकारी संगठनों, माता समितियों, युवा संगठनों, जनप्रतिनिधियों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और स्वयं–सहायता समूहों के इकाई स्तरीय अधिकारियों को शामिल करना।
- ब्लॉक से दो या तीन लामबंदकर्ताओं की पहचान करना। लामबंदकर्ताओं की न्यूनतम शैक्षिक योग्यता एसएससी पास होनी चाहिए और उसे लामबंदी के कौशलों तथा सांस्कृतिक कला से अच्छी तरह परिचित होना चाहिए।
- कलाजत्था बस्ती की बैठकें, घर–घर जाकर जागरुकता अभियान, रैलियां और पद यात्राएं आदि आयोजित करके गांवों, बस्ती और ब्लॉक स्तर पर संवेदीकरण अभियान चलाना।
- बाल श्रम वाले घरों के दरवाजों पर सामाजिक कलंक का एक निशान लगाना।
- जो माता–पिता अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते हैं, उनके खिलाफ कार्यवाही किये जाने वाले उपबंधों से माता–पिता को परिचित कराने के लिए श्रम विभाग और पुलिस विभाग के अधिकारियों को शामिल करते हुए बस्ती–वार बैठकें आयोजित करना।
- शिक्षा के लिए बच्चों को अभिप्रेरित करने तथा आनन्द के अनुभव के साथ सीखने का वातावरण सृजित करने के लिए बाल मेले आयोजित करना।
- पुराने छात्रों को शामिल करते हुए कलाजत्थे आयोजित करना।

शिक्षा और बाल अधिकारों का महत्व

- अपने बच्चों के कैरियर का निर्माण करने में माता–पिता की भूमिका।
- बच्चे के जीवन और विकास पर बंधुआ मजदूरी का प्रभाव।
- बालिकाओं के लिए शिक्षा का महत्व।
- समाज, परिवार और व्यक्ति पर अशिक्षा के प्रभाव, निरक्षरता के प्रभाव।
- कम आयु में विवाह और महिलाओं के जीवन पर उनके प्रभाव।
- बाल श्रम का पता लगाने तथा अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए माता–पिता को अभिप्रेरित करने हेतु समूहों तथा परिवार स्तर पर अभिप्रेरण बैठकें आयोजित करने हेतु कलाजत्थों के बाद अनुवर्ती शिविर आयोजित करना।

- प्रातः 9.00 बजे से सायं को 2.00 बजे तक दोपहर के भोजन वाले दिन के स्कूल स्थापित करना।

मानीटरिंग और फीडबैक

राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं के परियोजना निदेशक और फील्ड अधिकारी को अपने कार्यक्रम इस तरीके से नियोजित करने हैं कि वे प्रभावी मानीटरिंग और मार्गदर्शन के लिये एक महीने में कम से कम दो बार प्रत्येक स्कूल का दौरा कर सकें।

अनुदेशकों को प्रशिक्षण

आगामी वर्ष के लिए शैक्षिक रूप से और मानसिक रूप से अनुदेशकों को तैयार करने हेतु सात–दिवसीय प्रशिक्षण आयोजित करना।

सामान्य स्कूल प्रणाली के लिए बच्चों को योग्य बनाने हेतु बच्चों के लिए विशेष कोचिंग कराने हेतु अध्यापकों को तैयार करने के लिए दूसरा प्रशिक्षण आयोजित करना।

मूल्यांकन

मासिक यूनिट टेस्टों, तिमाही, छमाही और वार्षिक टेस्टों की योजना बनाई जायेगी और उन्हें आयोजित किया जायेगा। इस संबंध में हुई प्रगति को कार्डों में नोट किया जाता है। कमजोर बच्चों की पहचान की जायेगी और उन्हें अन्य बच्चों के बराबर लाने के लिए विशेष प्रयास किये जायेंगे।

स्कूल समितियां

चूंकि इन समूहों को संगठित किया जाता है और विकास के कार्यों में भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाता है, इसलिए ग्राम बाल श्रम समिति का गठन किया जा सकता है, जिसमें समिति के पदाधिकारी निम्नलिखित क्रियाकलापों के लिये जिम्मेदार होंगे।

- बाल श्रमिकों की पहचान।
- स्कूलों के लिए आवास व्यवस्था करने में सहयोग।
- अनुदेशकों की पहचान।
- नियमितता की जांच और मध्यावधि भोजन का उचित रखरखाव।
- अनुपस्थिति पर नियंत्रण।
- महत्वपूर्ण दिवसों पर होने वाले कार्यकलापों पर नियंत्रण।

बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा में लाना

बच्चों के लिए यह आवश्यक है कि स्कूल के वातावरण, ज्ञानार्जन की प्रक्रिया के अनुकूल होने के लिये और जीवन की सुव्यवस्थित प्रणाली रखने के लिए बच्चों की एक वर्ष में न्यूनतम उपस्थितियों की संख्या निर्धारित की जाए। उनके जीवन स्तर में सुधार करने के लिए अध्ययनों में बच्चों की रुचि बढ़ाने के लिए विशेष तरीकों को अपनाना होगा।

एक वर्ष के बाद तीसरी, चौथी और पांचवीं कक्षा के ड्राप–आउट छात्रों को सेतू पाठ्यक्रमों के माध्यमों से छठी कक्षा में दाखिला दिलाने हेतु तैयार किया जाता है। इस बात के प्रयास भी किए जाते हैं कि बच्चों को आवासीय स्कूलों में दाखिला दिलाने के लिए तैयार किया जाए।

बाल श्रम उन्मूलन हेतु सुझाव

- बाल श्रम न्यायालय की स्थापना, उपभोक्ता – न्यायालय की तर्ज पर होनी चाहिए।
- बाल श्रम मॉनिटरिंग सेल्स की स्थापना की जाये जिसे वकील, श्रम संघों के कार्यकर्त्ता तथा सरकारी व गैर सरकारी एजेन्सियों के लोग चलायें।
- प्राथमिक शिक्षा को सभी के लिए सुलभ, आकर्षक तथा आवश्यक कर देना चाहिए।
- माता–पिता, जनता तथा नियोक्ता की सोच में बदलाव लाना होगा जिसमें कि इन सबका सहयोग बाल श्रम के उन्मूलन हेतु प्राप्त हो सके। बाल श्रम के विरूद्ध एक सर्व मान्य सोच को सर्व साधारण में विकसित करने की जरूरत है जो इसे एक आंदोलन का रूप दे सके और जन जन यह निश्चित कर ले कि बच्चों के साथ यह अन्याय नहीं होने देंगे।

(लेखक बाल श्रम कार्यालय, जिला पंचायत परिसर, अलीगढ़, उ.प्र. में कार्यरत हैं।)

आर्थिक गतिविधियों में संलग्न बच्चों के लिए सहायता

जनगणना 2001 के अनुसार देश में 5–14 वर्ष के आयु वर्ग में कामकाजी बच्चों की संख्या 1.26 करोड़ है।

बाल श्रम एक सामाजिक–आर्थिक समस्या है। अतः इस समस्या से निपटने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। इसलिए कार्य से हटाए गए बच्चों के पुनर्वास हेतु राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना (एनसीएलपी) स्कीम के अलावा सरकार उन परिवारों के आर्थिक उन्नयन के लिए अन्य मंत्रालयों के विभिन्न विकासात्मक और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों/योजनाओं के अंतर्गत विभिन्न सक्रिय उपाय कर रही है। अन्य मंत्रालयों के साथ प्रभावी तालमेल हेतु सरकार ने महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, आवास एवं शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय और पंचायती राज मंत्रालय के प्रतिनिधियों वाले एक बाल श्रम संबंधी कारगर समूह का गठन किया है। **(पसूका)**

ग्रामीण बच्चों की वास्तविक स्थिति

सत्येंद्र कुमार श्रीवास्तव

भारत एक विकासशील देश है और आज यह जनसंख्या के मामले में विश्व में दूसरे स्थान पर है। आज भी इस देश की दो तिहाई से अधिक आबादी गांवों में ही निवास करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे प्रायः उपेक्षा का शिकार होते हैं। जबकि बच्चे ही देश का भविष्य हैं। ग्रामीण बच्चों का महत्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि उन्हीं अंकुरों को भविष्य के उपवन में शोभित होना है और इस देश रूपी बगिया में फूलों की तरह गमकना है। भारत जैसे देश का भविष्य विशेषतः ग्रामीण बच्चों की किलकारियों से होकर ही गुजरता है क्योंकि सदियों से भारत की आत्मा गांवों में बसती आई हैं। शहरी चकाचौंध से भारतीय गांव प्रभावित तो जरूर हुए हैं लेकिन उनका अस्तित्व अभी भी मिटा नहीं है। ग्रामीण बच्चों पर ध्यान देना इसलिए जरूरी हो गया है क्योंकि इनकी आज की खिलखिलाहट ही कल राष्ट्रीय उल्लास की इबारतों में बदल जाएगी।

लेकिन विडम्बना यह है कि ग्रामीण बच्चों और उनसे जुड़े विभिन्न परिप्रेक्ष्यों को वरीयता देने का क्रम दिनोंदिन कम होता जा रहा है। आजादी से पहले इस दिशा में सामाजिक तौर पर जितना कुछ सोचा या किया जाता था उसका घनत्व अब कम होता जा रहा है। यह बात जरूर है कि सरकार द्वारा इस दिशा में अनेक प्रयत्न किए गये हैं जिसमें पर्याप्त सफलता भी मिली है। आजादी के बाद ग्रामीण बच्चों के समग्र विकास की इस जिम्मेदारी को लोगों ने सरकारी क्षेत्र का एकांकी दायित्व मानकर अपना पल्ला झाड़ लिया है। सरकारी और गैर सरकारी संसाधनों के द्वारा संचालित कतिपय स्वैच्छिक परियोजनाएं भी इस क्षेत्र में सक्रिय अवश्य हैं लेकिन उनका असर अपेक्षित रूप से व्यापक और सघन नहीं है।

आज वर्तमान में बच्चों के नाम पर लुभावने नारे तो खूब लगाए जाते हैं, उनके विकास के लिए तरह–तरह के आयोजन भी अक्सर होते रहते हैं लेकिन सब कुछ रस्मों–रिवाज और औपचारिकता तक ही सीमित रह जाता है। इन सब कार्यक्रमों आदि की गंध बच्चों तक तो थोड़ी बहुत पहुंचती भी है मगर ग्रामीण बच्चों तक जाते जाते यह अगरबत्ती की तरह खत्म हो जाती है। ग्रामीण बच्चों की जरूरतों के लिहाज से उपयुक्त योजनाओं का आज भी अभाव है जो उनके समग्र विकास के प्रति वैज्ञानिक रूप से सुनिश्चित हों। ऐसे में छिटपुट तौर पर जो प्रयास जारी भी हैं वो बेअसर हो जाते हैं।

ग्रामीण बच्चे और जीवन स्तर

ग्रामीण बच्चों के जीवन स्तर में जिस तरह से गिरावट आ रही है। गांवों में मूलभूत सुविधाओं का जीवन स्तर जिस तरह से गिर रहा है खासकर के बच्चों की, यह बात हमें सोचने पर मजबूर करती है कि इसमें सुधार कैसे किया जाय। ग्रामीण बच्चों के जीवनस्तर में ग्रामीण विकास की स्थिति इसलिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि उसी के परिवेश में बच्चों का जीवन गुजरता है। बच्चों के विकास में सबसे अहम भूमिका अभिभावकों की होती है जो बच्चों को मूलभूत सुविधाएं मुहैया कराते हैं और उनके जीवन स्तर को ऊंचा करने में सहायता प्रदान करते हैं।

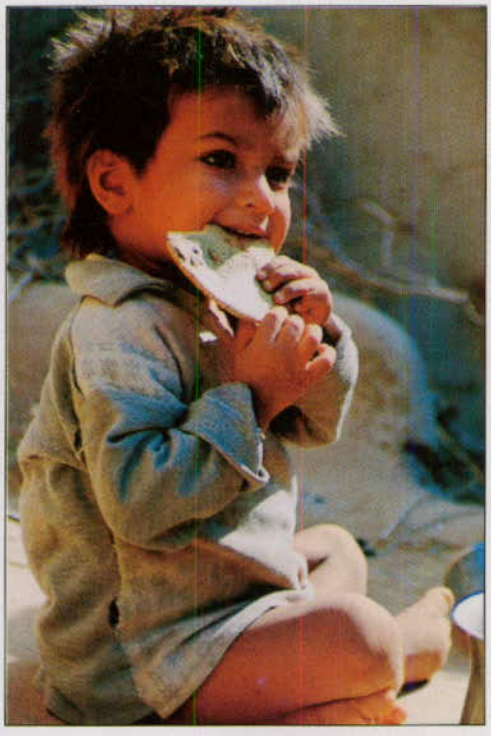

दूध न फूटी – बस बाजरे की रोटी

आजादी के बाद से भारतीय गांवों में विकास का चक्र निरन्तर तीव्र गति से चलता रहा है। इसके परिणामस्वरूप आम भारतीय ग्रामीण जन की आर्थिक सामर्थ्य भी बेहतर हुई है। एक ओर तो विकास संबंधी कार्यक्रमों ने गांवों में साधन, सुविधा और अवसरों की उपलब्धता की स्थिति में आजादी के करीब आधी शताब्दी की अवधि के दौरान धीरे–धीरे ही सही खासा इजाफा किया है। वहीं दूसरी ओर ग्रामीणों की सम्पन्नता में भी स्वतंत्रता पूर्व की अपेक्षा उछाल आया है। परिणामस्वरूप आज के ग्रामीण बच्चों का जीवन स्तर पहले की तुलना में काफी बेहतर हुआ है। स्वतन्त्रता पूर्व (1916) जहां स्कूल जाने वाले प्रति एक हजार ग्रामीण बच्चों में से महज 12 बच्चों को अपने गृह कार्य

बिजली की रोशनी में कर सकने की सुविधा प्राप्त थी वहीं 1996 में 783 प्रति हजार बच्चों को यह सुविधा उपलब्ध थी। धीरे–धीरे स्थितियां बदली और आज तो स्थिति यह है कि जब बच्चे पैदा होते हैं तो वे अपनी आंखें ही बिजली की रोशनी में खोलते हैं।

ग्रामीण बच्चों के जीवन स्तर में दिन प्रतिदिन सुधार आ रहा है। जहां 1941 में प्रति एक हजार ग्रामीण बच्चों में से 38 बच्चों के सिर पर पक्की छत की छाया थी वहीं 2001 में प्रति हजार 692 ग्रामीण बच्चों को यह सुविधा उपलब्ध है। भारत में ग्रामीण बच्चों के जीवन स्तर में सुधार उपलब्ध है। भारत में ग्रामीण बच्चों के जीवन स्तर में सुधार के लिए केवल बिजली और पक्के मकानों की ही भूमिका नहीं है बल्कि उनके पहनावे आदि की भी भूमिका महत्वपूर्ण है। 1935 तक जहां प्रति हजार ग्रामीण बच्चों में से सिर्फ 18 को ही अपने बदन ढकने के लिए वस्त्र उपलब्ध थे वहीं वर्ष 2000 में प्रति हजार पर 206 बच्चे इस सुविधा का लाभ उठा रहे थे। इन परिधानों की उपलब्धता में वृद्धि से ग्रामीण बच्चों के जीवन स्तर में जहां एक ओर सुधार झलकता है वहीं परिधानों की शैली उन बच्चों और उनके बहाने ग्रामीण जन जीवन में आई उस गिरावट की ओर भी संकेत करते है जो अपनी ही जड़ों से कटते जाने से उत्पन्न होती है।

बाम्बे इंस्टीट्यूट ऑफ फैशन टेक्नोलॉजी द्वारा वर्ष 2000 में जारी एक रिपोर्ट के मुताबिक 95.63 प्रतिशत ग्रामीण बच्चों के पोशाक पश्चिमी शैली के हैं और जिनके पोशाक ऐसे नहीं है उनकी ऐसे वस्त्रों के प्रति चाहत है।

देखा जाए तो वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों की स्थिति में सुधार आ रहा है और उन्हें अपने अस्तित्व का एहसास हो रहा है। परिवार भी जागरुक हो रहे हैं और अपने बच्चों को शिक्षा दीक्षा देने की पूरी व्यवस्था करते हैं। गांव के बच्चों में शिक्षा का संचार यदि उपयुक्त ढंग से कर दिया जाय तो ग्रामीण क्षेत्रों की तस्वीर कुछ और होगी।

ग्रामीण बच्चे और शिक्षा

बच्चे ही देश के भावी कर्णधार हैं और उनके व्यक्तित्व के निर्माण में सबसे अहम भूमिका शिक्षा की होती है। ग्रामीण बच्चों को शिक्षा प्रदान करने में सरकार निरन्तर प्रयत्नशील है। आजादी के बाद से आज तक सबसे ज्यादा ध्यान ग्रामीण बच्चों की शिक्षा पर ही दिया है। शिक्षा को गांव–गांव और बच्चे–बच्चे तक सर्व सुलभ कराने के लिए अनेक आयोगों एवं समितियों का गठन किया गया तथा ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (1988), न्यूनतम अधिगम स्तर (1989), सुस्पष्ट प्राथमिक शिक्षा (1992) जैसी अनेक योजनाओं को क्रियान्वयन में लाया गया। इन्हीं सब प्रयासों का यह परिणाम रहा कि ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों में साक्षरता दर काफी बढ़ी है। प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में भी खासी वृद्धि हुई है। स्वतंत्रतापूर्व जहां प्राथमिक विद्यालयों की संख्या लगभग 2.5 लाख थी वहीं आज यह बढ़कर लगभग 8 लाख (ग्रामीण + शहरी) हो गई है और आज भी वृद्धि का यह सिलसिला जारी है।

प्राथमिक विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना की शुरुआत की गई जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में हर किलोमीटर पर एक प्राथमिक विद्यालय की स्थापना की जा सके। आज योजना के लगभग दो दशक बीत चुके हैं लेकिन उतनी सफलता नहीं मिली जितनी अपेक्षित थी। हम इस बात को मान रहे हैं कि आज शिक्षा की परिभाषा बदल रही है। पहले जहां बुनियादी शिक्षा के लिए पैसे खर्च करने पड़ते थे वहीं आज सरकार ने इसे संविधान में संशोधन करके निःशुल्क शिक्षा का अधिकार प्रदान कर दिया। इतना ही नहीं बल्कि कापी, किताब, दोपहर के भोजन, छात्रवृत्ति और यूनिफार्म जैसी चीजें उपलब्ध कराने सम्बंधी अनेक प्रोत्साहनकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया। इन सभी कार्यक्रमों के संचालन में सरकार 100 अरब से भी ज्यादा खर्च करती है। फिर भी बढ़ती जनसंख्या के लिहाज से यह आज पर्याप्त नहीं है। विगत दिनों में अनुमान लगाया गया था कि 2010 तक 6 से 10 वर्ष के आयु वर्ग में स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या 10 करोड़ 90 लाख थी जिसमें ग्रामीण और शहरी बच्चों का प्रतिशत क्रमशः 58.06 प्रतिशत तथा 41.94 प्रतिशत है जबकि 11 से 13 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों का स्कूल जाने की संख्या 6 करोड़ 60 लाख है।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या में उम्र बढ़ने के साथ ही साथ दर्ज की जाने वाली गिरावट शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक रही है। शहरी क्षेत्रों में तो उम्र बढ़ने के साथ ही बच्चों की तादाद उतनी नहीं घटती क्योंकि शिक्षा को लेकर उन बच्चों के तकाजे कुछ और होते हैं। यह बात दुर्भाग्यपूर्ण है कि शिक्षा प्रक्रिया के मशीनीकरण के चलते कम उम्र के बच्चों को कल्पनाशील खेलों के माध्यम से संसार को अपने हिसाब से रचने की इच्छा दफन हो जाती है। इस प्रक्रिया के ग्रामीण बच्चे ही शिकार है।

शहरों की देखा–देखी गांवों में भी निजी स्कूलों का चलन बढ़ता जा रहा है। शहरों के पब्लिक स्कूल की तर्ज पर चलाये जा रहे ये निजी स्कूल प्रायः ठगी का सिक्का बन कर रह जाते हैं। ये निजी स्कूल अभिभावकों की उस भावना का लाभ उठाते हैं जो यह सोचते हैं कि बच्चों को निजी कान्वेन्ट स्कूलों में ही शिक्षा दी जानी चाहिए। आखिर में निजी स्कूल क्यों न अपना प्रभुत्व जमाएं जब सरकार अपने विद्यालयों में संसाधनों की सुनिश्चितता नहीं कर पा रही है। इन्स्टीट्यूट फार एजुकेशन एंड कल्चर के राष्ट्रीय सर्वेक्षण 1993 के मुताबिक भारत में चल रहे कितने स्कूलों के

पास न तो अपने निजी भवन हैं, न तो खेल के मैदान हैं, यहां तक की इनके पास पुस्तकालय भी नहीं हैं।

शिक्षा के सम्बन्ध में ग्रामीण बच्चों को शिक्षकों की कमी का सामना करना पड़ता है। आज जिस दर से ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की संख्या और छात्रों की संख्या बढ़ रही है। उसकी तुलना में शिक्षकों की कमी साफ झलकती है जिसके अभाव में शिक्षा व्यवस्था अधर में लटकती दिख रही है। देखा जाय तो वर्तमान में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में भारत में छात्र–शिक्षक का अनुपात 49:1 है। शिक्षकों की इस कमी से शिक्षकों पर बोझ बढ़ता जा रहा है और अपनी बड़ी कक्षा को संभालने के लिए शिक्षक पढ़ाई के नाम पर औपचारिक उपदेशात्मक तरीका अपनाते हैं। जिसका नतीजा शिक्षा व्यवस्था की असफलता के रूप में सामने आता है। यही सब कारण है जो बच्चों को बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने पर मजबूर कर देते हैं जिसकी समस्या आज व्यापक है। प्राथमिक क्षेत्र (1 से 5) तक बीच में पढ़ाई छोड़ देने वाले लड़कों का प्रतिशत 1960–61 में 61.7 प्रतिशत, 1970–71 में 64.5 प्रतिशत, 1980–81 में 56.2 प्रतिशत, 1990–91 में 42.2 प्रतिशत तथा वर्ष 2000–01 में 40.9 प्रतिशत रहा है। जबकि इसी स्तर पर लड़कियों का प्रतिशत 1960–61 में 70.9 प्रतिशत, 1970–71 में 69.8 प्रतिशत, 1980–81 में 68.0 प्रतिशत, 1990–91 में 60.6 प्रतिशत तथा 2000–01 में 54.1 प्रतिशत रहा है।

मसाला पीसने की खरड़ बनाता हुआ बाल श्रमिक

ग्रामीण बच्चों द्वारा बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने की प्रवृत्ति के संदर्भ में सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की तरफ से चिंता तो जरूर व्यक्त की जा रही है लेकिन इस समस्या के निदान के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाए जा रहे हैं। यदि ग्रामीण बच्चों की स्थिति को सुधारना है तो हमें जागरुक होना होगा और ग्रामीण क्षेत्रों की शिक्षा व्यवस्था में सहयोग करना होगा और तभी हमारा 'ग्रामीण भारत के विकास' का सपना पूरा होगा।

ग्रामीण बच्चे और स्वास्थ्य

स्वास्थ्य व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों की आधारभूत व्यवस्था है। गांवों में सामान्यतः इसका अभाव पाया जाता है। बच्चे देश के भविष्य होते हैं इसलिए उन्हें स्वस्थ रखना देश का कर्तव्य होता है। सरकार इस सम्बंध में निरन्तर प्रयत्नशील है कि जन–जन तक स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करायी जाय। 5905 समितियों और 2,32,278 ग्राम पंचायतों के तहत जिस देश के पांच लाख साठ हजार से अधिक गांवों में स्थापित स्वास्थ्य सेवाओं के ढांचे को भौतिक विस्तार की दृष्टि से आज विश्व का सबसे बड़ा स्वास्थ्य संजाल माना जाता है उस देश के प्रति एक हजार ग्रामीण बच्चों में से आज 384 बच्चे ही अपनी किसी जटिल बीमारी के इलाज के लिए गांवों में रहते हैं जबकि शेष 616 बच्चे अपने पारिवारिक सामर्थ्य के अनुसार आसपास के कस्बों, नगरों या दूरस्थ महानगरों में इलाज के लिए चले जाते हैं। क्योंकि इन अभिभावकों को गांवों में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं पर भरोसा नहीं है और लिहाजा जोखिम उठाने के बजाय अपने बीमार बच्चे को लेकर शहरों की ओर उन्मुख हो जाते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में मौजूद स्वास्थ्य सुविधाओं की दक्षता पर आम संदेह देश के अधिकतर ग्रामीण बच्चों को दोहरे तौर पर प्रभावित करता है। एक तो चिकित्सा आदि मामले में निर्णय का अधिकार उनके अभिभावकों के हाथों में रहने के कारण उन्हें इलाज के लिए गांव छोड़कर शहर आना पड़ता है और वहां जानकारी के अभाव में वे ठगे जाते हैं। दूसरा सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं के स्तरहीन होने की बात उनके मन में जगह कर जाती है। आज तो गांवों में पर्याप्त सुविधा मौजूद हैं। लगभग हर ब्लाक में एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले गये हैं। जरा आजादी के पहले के दिनों को याद कीजिए, जब गांवों पर एक छोटा सा स्वास्थ्य केन्द्र हुआ करता था तब ग्रामीण बच्चों की स्थिति क्या रही होगी?

ग्रामीण बच्चों को चिकित्सकीय सुविधाएं प्रदान करने के अलावा उन्हें स्वास्थ्य के प्रति जागरुक बनाने का काम भी गांवों में अरसे से होता आया है और यह जागरुकता जरूरी भी है क्योंकि बड़ों की अपेक्षा बच्चे कम बीमार पड़ते हैं। बशर्ते कि सेहत के प्रति सचेतता बरती जाय। स्कूल जाने वाले बच्चों को तो स्वास्थ्य सम्बंधी थोड़ी बहुत जानकारी मिल जाती है। लेकिन जो बच्चे स्कूल नहीं जा पाते हैं उनका क्या होगा। इस बात को ध्यान में रखकर ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सम्बंधी जागरुकता के प्रसार के लिए अनेक कार्यकर्ताओं को नियुक्त किया गया है। गांव की गंदगी, जहां–तहां कूड़ा, साफ पानी का अभाव, घरों का सीलनयुक्त होना जैसी तमाम ऐसी स्थितियां हैं जो बच्चों को डिप्थीरिया, टिटनेस, तपेदिक, खसरा आदि रोगों से प्रभावित कर देती हैं। इन

सब बीमारियों से बचाव के लिए तो बच्चों को अनेक प्रकार के टीके आदि लगाये जाने चाहिए ताकि वो स्वस्थ रहकर देश के विकास में अपना योगदान दे सकें।

ग्रामीण बच्चे और खेलकूद

ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों को स्वस्थ रखने का बहुत ही अच्छा तरीका खेल है। खेलना हर बच्चे का न केवल अधिकार बल्कि उसका सहज स्वभाव है। ग्रामीण या शहरी दोनों ही बच्चों के लिए खेल का महत्व किसी भी शिक्षा से कम नहीं है। क्योंकि खेल से बच्चे का शारीरिक और मानसिक विकास होता है। बच्चों में आपसी सहयोग, मेलजोल, आदान–प्रदान, मैत्री आदि गुणों का स्वाभाविक विकास होता है जो आगे चलकर उनके जीवन में काम आता है। लेकिन आश्चर्यजनक बात यह है कि आज भी ग्रामीण बच्चों को शहरी बच्चों की तुलना में कम सुविधाएं हासिल हैं। इस बात को स्वीकार करते हुए विख्यात महिला पर्वतारोही बछेन्द्रीपाल ने कहा है कि – "हमारे गांवों में खासकर दूरस्थ और जनजातीय गांवों में विभिन्न खेलों के सन्दर्भ में विकट प्रतिभाएं हैं और जरूरत इस बात की है कि वहां के ग्रामीण बच्चों को समय रहते उचित अवसर और मार्ग दर्शन उपलब्ध कराया जाय।"

निसंदेह भारतीय गांवों में खेल संबंधी प्रतिभाओं की कमी नहीं लेकिन इन खेल प्रतिभाओं को सुविधाएं मुहैया कराना हम सभी की सार्वजनिक जिम्मेदारी है जिससे राष्ट्रीय प्रतिभा के रूप में उभरकर सामने आ सके। ग्रामीण बच्चों के लिए खेलकूद की सुविधाएं आज गांवों में दो स्तरों पर उपलब्ध है – स्कूली स्तर पर, और सामुदायिक स्तर पर। जिन ग्रामीण बच्चों को स्कूल जाने का अवसर प्राप्त है उनके लिए तो दोनों ही स्तरों के द्वार खुले हैं लेकिन जो स्कूल जाने से वंचित हैं वे केवल सामुदायिक स्तर पर ही इस सुविधा का लाभ उठा पाते हैं। अधिकतर ग्रामीण स्कूलों में खेलों को केवल औपचारिकता के तौर पर ही लिया जाता है। खेल के घंटे का निर्धारण तो कर दिया जाता है लेकिन उसका सही उपयोग नहीं हो पाता है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक ग्रामीण क्षेत्रों के 72.08 प्रतिशत निजी स्कूलों में खेल प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं है जबकि 46.53 प्रतिशत सरकारी स्कूलों में खेल शिक्षक ही नहीं है। गांवों में बहुसंख्यक स्कूलों के पास खेल के मैदान भी नहीं है और ये स्कूल प्रायः अपने पास पैसा न होने का रोना रोया करते हैं। कुल मिलाकर खेलों के मामले में ग्रामीण बच्चों की दशा काफी दयनीय है। स्कूल स्तर पर हो या सामुदायिक स्तर पर शहरों की देखा–देखी आज गांव भी जो थोड़ी बहुत गतिविधियां करते हैं वे सीमित होती है और चंद खेलों पर जोर दिया जाता है। अतः खेलों का गांवों में व्यापक स्तर से प्रचार किया जाना चाहिए जिससे ग्रामीण बच्चों को अपने व्यक्तित्व विकास का एक साधन मिल सके और वे अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन देश के लिए करें।

ग्रामीण बच्चे और बालश्रम

ग्रामीण बच्चों के सामने बड़ी समस्या बालश्रम की है। गांवों के बच्चे अपने घरों के कामों में तो हाथ बंटाते ही हैं साथ–साथ अपनी रोजी–रोटी के लिए वे अन्य जगह भी श्रम करते हैं। वर्तमान में बालश्रम ग्रामीण बच्चों के लिए अभिशाप साबित हो रहा है। बाल मजदूरी देश के लिए घातक और शर्मनाक है। इसका सर्वाधिक प्रभाव ग्रामीण बच्चों पर ही पड़ता है। 2000 तक देश के कुल बाल श्रमिकों में से 81.23 प्रतिशत बालश्रमिक गांवों के ही हैं। जिस उम्र में उन्हें धूल–मिट्टी में खेलना और खिलखिलाना चाहिए और पढ़ लिख कर देश के भविष्य के रूप में सामने आना चाहिए उस उम्र में बहुतेरे ग्रामीण बच्चों को रोजी–रोटी कमाने के लिए विवश होना पड़ता है। वैसे बाल मजदूरी रोकने का सरकार निरन्तर प्रयास कर रही है और कानून भी बना रही है। फिर भी सरकार बालश्रम को रोकने में असफल ही नजर आ रही है।

आजादी के पूर्व बाल मजदूरी को रोकने सम्बंधी एक कानून 'बाल मजदूरी की पैरवी अधिनियम' जो 1983 में बनाया गया था और आजादी के बाद के दो कानून 'बाल अधिनियम' (1960) तथा 'बाल मजदूरी (निषेध एवं विनियम) अधिनियम' (1986) बनाया गया। ये अधिनियम बाल श्रमिकों को सुरक्षा तो प्रदान करते हैं लेकिन जब अपने घर वाले ही बालश्रम पर मजबूर कर देते हैं तो कानून किस काम का। आज यह समस्या व्यापक होती जा रही है। इस बालश्रम के पीछे अभिभावकों की अशिक्षा, उनका व्यसनी होना और निर्धनता आदि जैसे कारण उत्तरदायी हैं। जब पेट की आग न बुझे तो अपने नौनिहालों को इस दिशा में ढकेल देना स्वाभाविक सी बात है। हाल यह है कि 768 बच्चे प्रति हजार पारिवारिक निर्धनता के कारण इस आग में झोंक दिये जाते हैं।

बाल मजदूरी के तौर पर ग्रामीण बच्चों का शोषण कई हारिकारक उद्योगों में भी होता है। जहां चन्द रुपयों के बदले में उनकी सेहत के साथ–साथ खिलवाड़ किया जाता है। आतिशबाजी, माचिस, चूड़ी, रत्न तराशी जैसे कई खतरनाक उद्योग हैं जिनमें कानूनी तौर पर 14 वर्ष से कम के बच्चों को नहीं लगाना चाहिए लेकिन पूंजीपति अपने क्षणिक लाभ के लिए इस देश के भविष्यों का भविष्य बर्बाद करने पर तुले हैं। बालश्रम को रोकने सम्बंधी मुहिम जारी है। कई पश्चिमी देश भारत से निर्यात की जाने वाली कालीनों के साथ 'बालश्रम प्रयुक्त नहीं' का प्रमाणपत्र भी मंगवाने लगे हैं। जिससे कालीन उद्योग में बाल मजदूरी पर अंकुश लगा है। सबसे प्रमुख बात यह है कि बाल मजदूरी दूर करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता पर अंकुश लगाया जाना चाहिए।

(लेखक भारतीय जीवन बीमा निगम, मलिन बस्ती सम्बंधी एनजीओ से सम्बद्ध तथा अधिवक्ता हैं।)

ई–मेल : satyendra_131@rediffmail.com

संकट में बचपन

हिमांशु शेखर

लंबे अर्से से बच्चों को देश का भविष्य माना जाता है। आज भी इस अवधारणा में कोई बदलाव नहीं आया है। साठ साल पहले जब भारत आजाद हुआ था तो उस वक्त देशवासियों में सकारात्मक परिर्वतन की आस स्वाभाविक ही थी। इन छह दशकों में देश ने कई मायनों में उल्लेखनीय तरक्की भी की है। पर आज भी कई क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें व्यापक सुधार के बगैर राष्ट्र के भविष्य को संवारने का सपना पूरा नहीं हो सकता है। देश के भविष्य कहे जाने वाले बच्चों की वर्तमान हालत को सुधारे बिना विकसित होने का तमगा पाना संभव नहीं है। सही मायने में आजादी और तरक्की तो देश के हर वर्ग और प्रत्येक क्षेत्र में दिखनी चाहिए। भारत में अठारह वर्ष से कम उम्र वालों की संख्या 39 करोड़ 80 लाख है। अगर आंकड़ों की तह में जाएं तो पता चलता है कि चौदह साल से कम उम्र वाले 21 करोड़ बच्चे भारत में हैं। अब जरा इनके हालात पर गौर फरमाया जाय। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के मुताबिक देश में तीन साल से कम उम्र वाले 46 फीसदी बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि भारत में तकरीबन एक करोड़ बीस लाख बाल मजदूर हैं। गैर सरकारी संस्थाओं के मुताबिक यह संख्या छह करोड़ से अधिक है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की रिपोर्ट के मुताबिक 53.22 फीसदी बच्चे यौन शोषण के शिकार हैं। इन भयानक आंकड़ों को देखने के बाद देश के भविष्य का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है।

हिन्दुस्तान में स्वास्थ्य को ही धन माने जाने की भी पुरानी परंपरा है। बच्चों के लिए तो यह धारणा और भी अधिक महत्वपूर्ण है। पर हकीकत इससे बिल्कुल जुदा है। राष्ट्रीय परिवार सर्वेक्षण के मुताबिक तीन साल से कम उम्र के 46 फीसदी बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि ऐसे बच्चों को बचपन की बीमारियों में जान गंवाने का खतरा सामान्य बच्चों की तुलना में आठ गुना अधिक होता है। उल्लेखनीय है कि 1998–1999 के अंत में कुपोषण के शिकार बच्चों की संख्या 47 फीसदी थी। यानी बीते सात सालों में कुपोषण के स्तर में महज एक फीसदी की कमी आई है। एक तरफ देश में तेज आर्थिक विकास की गाड़ी सरपट भाग रही है। वहीं दूसरी तरफ यह बाल दुर्दशा काफी दुखद है।

अहम सवाल यह है कि आखिर बच्चों के कुपोषण के पीछे कारण क्या है। इस सवाल के जवाब में कई बातें उभरकर सामने आती हैं। सबसे पहले तो यह कहा जाता है कि आर्थिक तंगी बच्चों के कुपोषण की बड़ी वजह है। व्यवहारिक धरातल पर इस तर्क की सत्यता जो भी हो पर आंकड़े इससे मेल नहीं खा रहे हैं। भारत में गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की कुल संख्या 26 फीसदी है। कुपोषित बच्चों की संख्या भी इसके आस–पास न होकर 46 फीसदी है। एक बात और की इस सरकारी रिपोर्ट के मुताबिक गुजरात और उत्तर प्रदेश में तय मानक से कम वजन के 47 फीसदी बच्चे हैं। गौरतलब है कि गुजरात की प्रति व्यक्ति आय उत्तर प्रदेश के प्रति व्यक्ति आय से कई गुना अधिक है। यानी तथ्यों से एक बात की ताकीद हो जाती है कि आर्थिक हालात से बच्चों के कुपोषण का कोई खास सरोकार नहीं है।

ऐसे में मूल प्रश्न यह है कि आखिर क्यों इतने भारी तादाद में बच्चे कुपोषण के शिकार हो रहे हैं। इसके पीछे जिम्मेदार वास्तविक वजहों में प्रमुख है जन्म के समय बच्चों का वजन तय मानक से कम होना। इस समस्या की तह में जायें तो पता चलता है कि इसके लिए गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य की खराब हालत जिम्मेदार है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में जन्म के समय ढाई किलो से भी कम वजन वाले बच्चों की संख्या बीस से तीस फीसदी के बीच है। बच्चों के कुपोषण के पीछे दूसरी बड़ी वजह स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है। 2005–06 में 12 से 23 माह के मात्र 44 फीसदी बच्चों को सभी आवश्यक टीके दिए गए थे। वहीं दूसरी तरफ डायरिया से पीड़ित महज 26 फीसदी बच्चों को ओ. आर.एस. (ओरल रिहाड्रेशन सोल्यूशन) दिया गया था। श्वास संबंधी समस्याओं और बुखार से जूझ रहे मात्र 64 फीसदी बच्चों को स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया हो पाई। ऐसे में बच्चों के कुपोषण से उबरने की उम्मीद कैसे की जा सकती है। इस समस्या को गहराने में लोगों में जागरुकता का अभाव भी कम जिम्मेदार नहीं है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के मुताबिक 2005–06 में मां बनी महिलाओं में से बच्चे के जन्म से पूर्व कम से कम तीन बार चिकित्सक के पास जाने वालों की संख्या महज 51 फीसदी थी। जबकि 52 फीसदी महिलाओं ने बगैर किसी चिकित्सीय देख देख के बच्चों को जन्म दिया।

बच्चों को मां का दूध नहीं मिल पाना भी कुपोषण की बड़ी वजह है। इस बात में शक की कोई गुंजाइश ही नहीं है कि बच्चों के लिए उनकी मां का दूध अमृत तुल्य है। जानकारों के मुताबिक चार से छह माह के बच्चों को मां के दूध के अतिरिक्त भी कुछ दिया जाना चाहिए। ऐसे में इस मोर्चे पर हो रही चूक बच्चों के कुपोषण के लिए भी कम कमजोर नहीं है। एक अनुमान के मुताबिक छह से नौ माह के मात्र 56 फीसदी बच्चों को ही मां के दूध के अतिरिक्त कुछ खाद्य पदार्थ मिल पा रहा है। इसलिए छह माह से आठ माह के उम्र में ही ज्यादातर बच्चे कुपोषण के शिकार हो रहे हैं। क्योंकि यह वह दौर होता है जब मां का दूध घटने लगता है। जिससे बच्चे को मिलने वाले पोषक तत्वों में भी कमी आती है। जिसकी भरपाई के लिए आवश्यक अतिरिक्त आहार से 44 फीसदी बच्चे वंचित रह जाते हैं। उल्लेखनीय है कि गर्भवती महिलाओं का शैक्षणिक स्तर भी बच्चों के कुपोषण को दूर करने में आड़े आ रहा है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के मुताबिक कम से कम दस साल की स्कूल शिक्षा ग्रहण करने वाली गर्भवती महिलाओं के बच्चों में 26 फीसदी कुपोषण के शिकार हैं जबकि अशिक्षित, महिलाओं के बच्चों में से 55 फीसदी को कुपोषण की मार झेलनी पड़ रही है। इसे स्वास्थ्य सुविधाओं की दुर्दशा कहना ही ठीक होगा कि आज भी देश में पांच साल से कम उम्र के हजार बच्चों में 95 काल के गाल में समा जा रहे हैं। उड़ीसा में यह संख्या सबसे अधिक 98 है तो केरल में सबसे कम 14 है। केरल और उड़ीसा के साक्षरता दर का असर इन दोनों राज्यों के बाल मृत्यु दर पर स्पष्ट दिख रहा है।

बहरहाल, खेलने कूदने की उम्र में मजदूरी कर रहे बच्चों की संख्या भी कम नहीं है। सरकारी आकड़ों के मुताबिक देश में तकरीबन 1.20 करोड़ बच्चे बतौर श्रमिक काम करने को अभिशप्त हैं। जबकि गैर सरकारी संस्थाओं के मुताबिक ऐसे अभागे बच्चों की संख्या छह करोड़ के आस पास है। बाल शोषण पर सरकारी अध्ययन रिपोर्ट के मुताबिक आजादी के साठ साल व बाल मजदूर निषेध एवं नियमन कानून बनने के 21 वर्ष बाद भी 1.7 करोड़ बच्चे असुरक्षित बचपन, यौन उत्पीड़न व शोषण के शिकार हैं। कुल बाल मजदूरों में से 56 फीसदी से अधिक खतरनाक व अवैध पेशों में काम करने को मजबूर हैं। ये आंकड़े बताते हैं कि बच्चे किस कदर खतरनाक परिस्थितियों में अपना एक–एक पल गुजार रहे हैं। आज जब देश चौतरफा प्रगति की ओर बढ़ रहा है, ऐसे में इस नाजुक मसले की उपेक्षा कहां तक जायज है। बगैर बच्चों के हालात में सुधार किए विकास की बात करना सरासर गलत है। आज जरूरत इस बात की है कि बाल मजदूरी की पीछे जिम्मेदार वजहों को दूर किया जाए। केवल कानून बना देने भर से इस गंभीर समस्या का समाधान नहीं होगा। कानून को कड़ाई से लागू करवाने के साथ–साथ जिम्मेदार आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को भी दूर करने की दरकार है।

हिन्दुस्तान में भारी संख्या में मासूमों को हवस का शिकार बनाया जा रहा है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की बाल शोषण पर एक अध्ययन रिपोर्ट के मुताबिक देश के 53.22 फीसदी बच्चे यौन शोषण के शिकार हैं। यौन शोषण की शिकार केवल लड़कियां ही नहीं बल्कि लड़के भी हैं। इस रिपोर्ट के मुताबिक 47.06 फीसदी लड़कियां यौन शोषण का शिकार हैं। जबकि 52.94 फीसदी लड़के इस समस्या से दो–चार हो रहे हैं। लड़कों के यौन शोषण के मामले में 52.94 फीसदी के साथ राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली शीर्ष पर है। वहीं लड़कियों के यौन शोषण में गौरवशाली गुजरात 65.64 फीसदी के साथ शिखर पर विराजमान है। इस रिपोर्ट में यह बात भी उभरकर सामने आई है कि पांच से बारह साल के उम्र में यौन शोषण के शिकार होने वाले बच्चों की संख्या सर्वाधिक है। उम्र के इस शुरूआती दौर में 39.58 फीसदी बच्चों को हवस का शिकार बनाया गया। वहीं तेरह–चौदह साल के 24.83 फीसदी यौन शोषण से रुबरु हो रहे हैं। जबकि पंद्रह से अठारह साल की उम्र में यौन शोषण के अभिशाप को झेलने वाले 72.1 फीसदी बच्चे इस मामले में चुप्पी साधना ही बेहतर समझते हैं। एक और भयावह तथ्य यह है कि भारत में वेश्यावृति में लगी बीस लाख महिलाओं में से बीस फीसदी की उम्र पंद्रह साल से भी कम है। यानी खेलने–पढ़ने की उम्र में चार लाख बच्चियां लोगों की हवस को शांत करने का जरिया बने रहने को अभिशप्त हैं।

फिलहाल, बच्चों पर मंड़राते संकट के ये बादल कब छटेंगे, कहा नहीं जा सकता है। पर एक बात तो तय है कि बगैर बच्चों के दुखद हालात को सुधारे राष्ट्र को प्रगति के पथ पर तेजी से अग्रसर नहीं किया जा सकता है। आजादी के साठ साल होने के अवसर पर पूरे भारत को बच्चों की दयनीय स्थिति में सुधार का संकल्प लेने की जरूरत है। जन–जन की सामाजिक भागीदारी के बिना यह बड़ा लक्ष्य नहीं पाया जा सकता है। पर सरकार की इसमें सबसे अहम भूमिका है। समय रहते बच्चों की वर्तमान स्थिति को बदलना ही होगा।

(लेखक संडे पोस्ट समाचारपत्र में उपसम्पादक हैं।)
ई–मेल : shekhar.du@gmail.com

नयी परियोजनाएँ नया दौर
कृषि जगत उन्नति की ओर

डॉ. मनमोहन सिंह
माननीय प्रधानमंत्री

श्री शरद पवार
माननीय कृषि, उपभोक्ता म
खाद्य और सार्वजनिक वितर

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन

- इसका उद्धेश्य वर्ष 2011–12 तक 10 मिलियन टन चावल, 8 मिलियन टन गेहूं और 2 मिलियन टन दालों का अतिरिक्त उत्पादन करना है ताकि खपत मांग को पूरा किया जा सके और देश में खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सके।
- देश में 16 राज्यों के 305 जिलों में लगभग 250 लाख किसानों के लाभान्वित होने की आशा है।
- कुछ क्षेत्रों, जिनमें किसान मिशन के प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों के अनुसार वित्तीय सहायता पाने के पात्र हो सकते हैं, में शामिल हैं :–
  - → बेहतर गुणवत्ता वाले बीज।
  - → फार्म मशीनरी।
  - → खेत पर जल प्रबंधन।
  - → कीटनाशियों के कुशलतम प्रयोग हेतु समेकित कीट प्रबंधन।
  - → मृदा स्वास्थ्य बढ़ाने के लिए समेकित पोषक तत्व प्रबंधन।
- किसानों को लाभ पहुंचाने वाले अन्य क्रियाकलापों में शामिल हैं :–
  - → बड़े पैमाने पर क्षेत्र प्रदर्शनों के जरिए उन्नत पैकेज पद्धतियों का प्रदर्शन।
  - → विस्तार समर्थन प्रदान करने के लिए कृषक फील्ड स्कूलों (एफएफएस) का आयोजन।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना

- योजना के मुख्य उद्देश्य हैं:–
  - → कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने के लिए राज आर्थिक प्रोत्साहन।
  - → यह सुनिश्चित करना कि जिलों/राज्यों की कृषि योजनाएं जलवायुवीय परिस्थितियों, प्रौद्योगिकी और प्राकृतिक संसाधन उपलब्धता के आधार पर तैयार की जाती है।
  - → महत्वपूर्ण फसलों में उपज के अन्तर को कम करना और संकेन्द्रि समग्रवादी पहलों के जरिए कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में उत्पादन उत्पादकता को बढ़ाना।
  - → यह सुनिश्चित करना कि जिलों/राज्यों की कृषि योजनाओं में स्थ जरुरतें/फसलें/प्राथमिकताएं बेहतर रुप से प्रतिबिम्बित हैं।
  - → कृषि और सम्बद्ध क्षेत्र स्कीमों के नियोजन और कार्यान्वयन में राज लचीलापन और स्वायत्ता प्रदान करना।
  - → कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों में किसानों की आय को अधिकतम करना।
- योजना के तहत केन्द्र से सहायता हेतु पात्रता आधारभूत से ज्यादा व लिए कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों हेतु राज्य के योजना बजट की धनराशि प्रदान वाली राज्य सरकार पर निर्भर होगी।

कृषि एवं सहकारिता विभाग
कृषि मंत्रालय
भारत सरकार

समृद्ध किसान — उन्नत देश

davp 01101/13/0033/0708

KH-11/07/05

कृषि विविधिकरण : आवश्यकता एवं लाभ

डॉ. वाई. एस. शिवे एवं हर नारायण मीना

विश्व में आज हर क्षेत्र में जिस तेजी से प्रगति हो रही है, उसी तेजी से विश्व की जनसंख्या भी बढ़ रही है। परिणामस्वरूप एक तरफ जहां शहरीकरण के कारण कृषि क्षेत्र घट रहा है वहीं कृषि के शेष सीमित क्षेत्र पर और अधिक फसल उपजाने का दबाव बढ़ता जा रहा है। अतः खाद्य सुरक्षा भारतवर्ष के सम्मुख एक कड़ी चुनौती है। खाद्य सुरक्षा चुंनिदा उन्नतशील फसलों के विकास से ही संभव नहीं है, इसके लिए यह भी जरूरी है कि उन असंख्य परम्परागत फसलों व किस्मों को उन्नत कर, उनका प्रचार या प्रसार किया जाए जिनका प्रयोग खाद्य पदार्थ के रूप में संभव हो सकता है, जो पौष्टिक हो, सस्ती व कम लागत वाली हो तथा प्रत्येक जलवायु के लिए अनुकूल हो। कृषि के समुचित विकास एवं कृषि भूमि के बेहतर उपयोग के लिए बाजार को ध्यान में रखते हुए कृषि विविधिकरण अपनाना अति आवश्यक हो गया है। कृषि विविधिकरण के अंर्तगत एक प्रकार की फसल के साथ–साथ अन्य फसलों व तंत्रों का समावेश किया जाता है जिससे एक ही प्रकार की फसल के लगातार उगाये जाने से होने वाली हानि से बचाव हो तथा कृषि क्षेत्र में जोखिम कम हो सके।

वर्तमान में भारत में कुल फसल पद्धति का लगभग 85 प्रतिशत भाग अनाजी फसलों जैसे धान–गेहूं (12.0 मि. है.) और मक्का–गेहूं (1.9 मि. है.) इत्यादि हैं। लेकिन इस अनाजी फसल पद्धति से कुछ नये कुप्रभावों का सामना करना पड़ रहा है जैसे उत्पादकता, कारकों का घटना, जल एवं भूमि संसाधनों का कम होना, जैव–विविधता में कमी, भू जल सतह का नीचे गिरना, वातावरण प्रदूषण बढ़ना और परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन जो कि हरित क्रांति की आभा को बुरी तरह से प्रभावित करते हैं। इससे भी आगे लगातार बार–बार एक ही भूमि पर अंसतुलित नत्रजन उर्वरक के उपयोग के साथ एक ही फसल उगाने से (फास्फोरस, पोटाश एवं सल्फर) का दोहन ही नहीं अपितु बहु सूक्ष्म तत्वों की कमी भी हुई है। इन परिस्थितियों में जहां विशेष फसल पद्धति जैसे अनाज लगातार वर्षों तक उपयोग में लाई जा रही है, वहां पर कृषि विविधिकरण का बहुत अधिक महत्व है।

गन्ना, प्याज और गैंदे की मिश्रित खेती

कृषि विविधिकरण की अवधारणा

शुरूआती दौर में कृषि विविधिकरण केवल एक फसल को बदल कर उसकी जगह दूसरी फसल को उगाना ही समझा जाता था। लेकिन वास्तविक अर्थ में, यह मौजूदा कृषि पद्धति ज्यादा संतुलित पद्धति जैसे अनाजों, दालों, तिलहन, रेशेदार चारा, ईंधन इत्यादि की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति के लिए और मृदा एवं कृषि पारिस्थितिक तंत्र में सुधार करने के लिए अनुकूल परिवर्तन ला रही है।

कृषि विविधिकरण के निर्धारक

वास्तव में कृषि विविधिकरण बहुत से कारकों के अंतरक्रियात्मक प्रभावों का परिणाम है। ये विभिन्न कारक इस प्रकार हैं।

- संसाधन संबंधित कारक जैसे सिंचाई, वर्षा एवं मृदा उर्वरता।
- तकनीकी कारक जैसे बीज, उर्वरक तथा जल तकनीकियों के साथ–साथ विपणन, भण्डारण तथा प्रसंस्करण संबंधी भी शामिल हैं।
- गृह संबंधित कारक जैसे भोजन, चारा और ईंधन तथा इसी तरह निवेश की क्षमता भी।
- मूल्य संबंधित कारक जैसे आगत एवं निर्गत मूल्य, उसके साथ–साथ व्यापार तथा आर्थिक नीतियां जो कि मूल्य को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करती हैं।
- संस्थानात्मक एवं ढांचागत कारक जैसे प्रक्षेत्र का क्षेत्रफल इससे संबंधित व्यवस्थाएं, अनुसंधान परिस्थितियां तथा बाजार पद्धति एवं सरकारी विनियम नीतियां इत्यादि।

स्पष्टतः ये सभी कारक अपने आप में नहीं बल्कि अंतरक्रियात्मक हैं, यानी की एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

सारणी–1 भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फसल चयन में बदलाव

क्षेत्र	बढ़ती हुई फसलें	घटती हुई फसलें
1. उत्तर	धान, गेहूं, सरसों	मोटे अनाज, चना, जई
2. दक्षिण	बागवानी फसलें, कपास, अरहर, नारियल	महीन अनाज, ज्वार, बाजरा
3. पूर्व	धान, सरसों, आलू	तिलहन, मक्का, मोटे अनाज
4. पश्चिम	सोयाबीन, गन्ना, धान, गेहूं	ज्वार, बाजरा, मूंगफली

कृषि विविधिकरण की आवश्यकता

हरित क्रांति के महत्व को कृषि क्षेत्र में नकारा नहीं जा सकता है, परंतु इसके अंतर्गत प्रमुख रूप से गेहूं व चावल पर अत्यधिक बल दिया गया जिसके परिणामस्वरूप हम बाजरा व मक्का उत्पादन में पिछड़ने लगे तथा तिलहन व दालों का उत्पादन भी हमारी आवश्यकताओं से काफी कम होने लगा है जिसकी भरपाई हम आयात करके करने लगे हैं। इसके साथ ही गेहूं व चावल के भंडारण की समस्या भी उत्पन्न होने लगी है।

मृदा व जल प्रबंधन तंत्रों के त्रुटिपूर्ण प्रयोग से भारतीय कृषि के सत्ततीकरण स्वरूप को खतरा उत्पन्न हो गया है। पुरानी पद्धति द्वारा भूमि, जल एवं बीजों का उचित सामर्थ्य प्राप्त नहीं हो पा रहा है। सन् 1980 के दशक के पश्चात् भारत में कृषि पद्धति में बहुत परिवर्तन देखा गया। अधिकतर सिंचित क्षेत्र में गेहूं धान और मक्का व गन्ने का प्रचार हुआ एवं बाजरा, ज्वार, चना, मूंगफली, अलसी और महीन दाने वाली फसलें जैसे तिल आदि का क्षेत्र सीमित हो गया (सारणी 1)।

एक ही प्रकार की फसल को नियमित रूप से उगाने के कारण कुछ विशेष कीटों व व्याधियों की समस्या भी उत्पन्न हो गई है। इसके कारण अनियंत्रित रसायनों के प्रयोग से भूमि व भूमिगत जल में प्रदूषण की समस्या सर्वविदित है। पंजाब में नाइट्रेट की भूमिगत जल में मात्रा न्यूनतम से कहीं अधिक है। साथ ही विभिन्न पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता भी निरंतर कम होती जा रही है (सारणी 2)।

सारणी–2 भारत में पोषक तत्व उपभोग क्षमता का वर्तमान स्तर

पोषक तत्व	उपयोग क्षमता (प्रतिशत)
नत्रजन	30.5
फॉस्फोरस	10.2
पोटेशियम	8.0
जस्ता	2.5
लोहा	1–2
तांबा	1–2

अनाजी फसलों पर आधारित फसल तंत्रों के विस्तार से प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन होता है। भूमिगत जल स्तर कम होता है। सूक्ष्म तत्वों की कमी बढ़ जाती है। नये खरपतवारों का समावेश होता है तथा जैव विविधता में कमी आती है। अतः खाद्यान्न पशुओं के लिए चारा व ईंधन की आपूर्ति के साथ–साथ मृदा की उर्वरता व उत्पादकता बनाए रखने के लिए कृषि विविधिकरण एक उत्तम विकल्प है।

समफसल पद्धति का क्षेत्रफल बढ़ने से बहुत सी कृषि समस्याएं उभर कर आईं हैं। जो कि कृषि विविधिकरण से भी कम की जा सकती हैं। ये समस्याएं इस प्रकार हैं।

- अत्यधिक भू–जल के उपयोग से भू–जल में कमी तथा जल उपयोग क्षमता कम हुई है।
- मृदा गुणवत्ता में कमी।
- खरपतवारों, कीटों तथा व्याधियों का लगातार कुप्रभाव।
- ऊर्जा का एक तरफा उपयोग।
- अन्य संरक्षित खाद्य तथा अधिक मूल्य वाली फसलों की उपलब्धता में कमी।
- पारिस्थितिक तंत्र में प्रदूषण होना।

इसके अलावा आज भारत के संदर्भ में कुछ ऐसी जरूरतें हैं जो कि कृषि विविधिकरण अपनाने के लिए संकेत करती हैं।

- छोटी जोतों से आय बढ़ाना ।
- मूल्य के उतार–चढ़ाव को रोकना।
- बदलते मौसम के बुरे प्रभावों से बचना।
- संतुलित भोजन।
- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण ।
- खाद्य की गुणवत्ता बढ़ाना।
- वातावरण प्रदूषण को कम करना ।
- आसानी से उपलब्ध नहीं होने वाले आगतों पर निर्भरता में कमी।
- बढ़ते हुए कीट एवं खरपतवारों की समस्या कम करना।
- खाद्य सुरक्षा।

कृषि विविधिकरण के प्रकार

कृषि–विविधिकरण को तीन प्रकार से अपनाया जा सकता–

- खाद्यान्नों के साथ अन्य फसलों (तिलहन, गन्ना) को लेना।
- कृषि के साथ पशुधन को सम्मिलित करना (मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, दुग्ध व्यापार, रेशम कीट पालन आदि)।
- कृषि के साथ कृषि संबंधित लघु उद्योगों का समावेश(हथकरघा, कृषि प्रसंस्करण)।

सिंचित क्षेत्र के लिए विकल्प

भारत का लगभग 80 प्रतिशत खाद्यान्न केवल 10 फसलों से प्राप्त होता है। अतः धान–गेहूं फसल चक्र में विविधिकरण करते हुए बरसीम, धान, सरसों, गन्ना आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। कम से कम धान– गेहूं के 20 प्रतिशत क्षेत्र में दूसरी फसल उगाई जा सकती है। जैसे बासमती धान, अरहर, कपास, सोयाबीन इत्यादि। कुछ प्रचलित फसल चक्र जैसे मक्का–आलू–प्याज, मक्का–आलू–मूंग, मक्का–गेहूं–मूंग आदि संभव है जिससे लगभग 40–50 प्रतिशत जल की बचत होगी। इसी प्रकार गेहूं के स्थान पर मटर, आलू , सरसों, चना उगाया जा सकता है।

गन्ना व धनिया की मिलीजुली खेती

बारानी क्षेत्रों के लिए विकल्प

बारानी क्षेत्रों के लिए अधिक जल मांग वाली फसल की उपेक्षा करते हुए बाजरा–सरसों, बाजरा–आलू, कपास मूंगफली, मूंगफली–ज्वार, ज्वार–गेंहू, कपास–ज्वार, कपास–कुसुम आदि फसल चक्र अपनाने चाहिए। अतः फसल प्रणाली में जैसे मक्का + सोयाबीन, मक्का + धान, ज्वार + सोयाबीन, अरहर+मूंग इत्यादि उगाना लाभकर है।

कृषि विविधिकरण से लाभ

- कृषि विविधिकरण अपनाकर एक साल में कई फसलें उत्पन्न कर सकते हैं जिससे किसान अपनी आमदनी कई गुणा बढ़ा सकते हैं।
- एक फसल से होने वाली क्षति को दूसरी फसल से पूरा किया जा सकता है।
- इससे साल भर रोजगार उपलब्ध रहता है तथा युवा पीढ़ी को शहरों की तरफ पलायन से रोका जा सकता है।
- कृषि विविधिकरण बाजार की कीमतों के उतार चढ़ाव को वहन करने में अधिक सक्षम होता है तथा परिवार के लिए स्थाई कटाई को पूर्ण करता है।
- विभिन्न फसलों के उत्पादन में विविधता आती है तथा संतुलित भोजन प्राप्त होता है। मात्रात्मक पहलू के साथ गुणात्मक रूप से भी कृषि विविधिकरण के उत्पाद अधिक उपयोगी हैं। निर्यात उन्मुखी फसलों का प्रचार अधिक होता है जो वार्षिक आय को बढ़ाता है।

कृषि विविधिकरण के लिए आवश्यताएं

जहां कृषि विविधिकरण समय की मांग व देश की आवश्यकता बन रही है, वहीं इसको अपनाते समय हमें कुछ सावधानियां भी रखनी होगी जैसे :–

- अन्य खाद्यान्नों का उत्पादन तो बढ़े , परन्तु हमारे मुख्य खाद्यान्नों के उत्पादन पर इसका कुप्रभाव न पड़े।
- फल–सब्जियों का उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्नत किस्म के बीज का उत्पादन व उन्हें किसानों तक पहुंचाये जाए।
- उत्पादन के बाद उन्हें नष्ट होने से बचाया जा सके, ऐसे तरीकों की खोज भी करनी होगी । अतः कृषि प्रसंस्करण को बढ़ावा देना चाहिए ।
- किसानों को लोन /ऋण की सुलभ सुविधा हो तथा उनके उत्पादन का पूरा मूल्य मिले, इसे सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
- गांव व शहरों के बीच की सड़कें मजबूत हों तथा यातायात के सुगम व सुलभ साधनों की व्यवस्था हो, ऐसे प्रयास भी करने होंगे।
- किसानों को सिंचाई व अन्य तकनीकी सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए।

निष्कर्ष

आज कृषि क्षेत्र को फिर बदलाव की आवश्यकता है जो कि कृषि विविधिकरण के रूप में हो सकती है। यह कोई नया परिवर्तन नहीं है, इसे नये ढंग से अपनाने की आवश्यकता है। कृषि विविधिकरण से किसानों की गरीबी को दूर किया जा सकता है तथा बाजार में नये व विविध उत्पाद प्राप्त किये जा सकते हैं। कृषि विविधिकरण सतत कृषि के लिए महत्वपूर्ण पुर्जा हो सकता है। घरेलू व अंतर्राष्ट्रीय मांग को देखते हुए कृषि विविधिकरण रोजगार की तकनीक सिद्ध हो सकता है। यदि खाद्य सुरक्षा को कायम रखना है तो कृषि विविधिकरण का विकास व प्रचार–प्रसार कर प्राकृतिक संतुलन को बनाते हुए हम अपने लक्ष्य को पा सकते हैं।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली में वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं।)

ई–मेल : ysshivay@iari.res.in

ग्रामीण भारत की आधारभूत संरचना

डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी

आर्थिक विकास में अवस्थापना (आधारभूत संरचना) क्षेत्र की भूमिका आधारिक होती है। यह विकास का चालक होता है। अवस्थापनाओं को भौतिक और सामाजिक अवस्थापना में विभक्त किया जाता है। यदि अवस्थापना क्षेत्र की उपलब्ध सेवायें अपर्याप्त और सक्षम कम हैं तो आर्थिक क्रियाओं की परिचालन लागत अधिक हो जाती है और समग्र विकास बाधित होता है। समर्थ अवस्थापनागत क्षेत्र अपने अग्रगामी और पश्चगामी सह–संबंध द्वारा आर्थिक विकास में त्वरण उत्पन्न करता है। भौतिक अवस्थापना में परिवहन, विद्युत और संचार आदि मुख्य है जो अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाते हैं तथा सामाजिक अवस्थापना में आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल आपूर्ति आदि मुख्य हैं जो प्राथमिक सेवाओं के रूप में होते हैं। उनका जीवन की गुणवत्ता और कार्यक्षमता पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता हैं। देश में राष्ट्रीय राजमार्ग, टेलीकम्युनिकेशन, रेलवे, बंदरगाह आदि के लाभ नगरीय और ग्रामीण क्षेत्र के लिये खुले हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की प्रकृति नगरी और बाजार अर्थव्यवस्था से भिन्न होती है। यहां ग्रामीण अर्थव्यवस्था की प्रमुख भौतिक और सामाजिक अवस्थापनागत सुविधाओं का विश्लेषण किया गया है।

भारतीय अर्थव्यवस्था मूलतः ग्रामीण है। यह भारत की विशिष्टता है और प्राकृतिक उपहारों का परिणाम है। यहां के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत भाग कृषि योग्य है जबकि विश्व स्तर पर यह मात्र 10 प्रतिशत है। भारत की लगभग 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है। इसलिये ग्रामीण विकास अर्थव्यवस्था के समग्र विकास की पूर्वापेक्षा है। ग्रामीण विकास के लिये सक्षम अवस्थापना सुविधाओं की पर्याप्त आवश्यकता है। नियोजन काल में समय–समय पर अवस्थापना विकास के लिए विशेष कार्यक्रम चलाये गये। विकास कार्यक्रम में ग्रामीण अवस्थापना विकास को ऊंची प्राथमिकता दी थी। इन प्रयासों के बाद भी ग्रामीण अवस्थापना की निरपेक्ष कमी है और उन तक जन–सामान्य की पहुंच अत्यंत कम है। अवस्थापना सुविधा की कमी विकास प्रक्रिया का प्रमुख बाधक घटक है। अनुमान किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्र के लगभग 89 प्रतिशत परिवारों के पास टेलीफोन नहीं है। 52 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास विद्युत कनेक्शन नहीं हैं। 20 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को सुरक्षित पेयजल की कमी है। सर्वकालिक सड़कों तक पहुंच कम है। सर्वकालिक सड़कों से अभी गांव की औसत दूरी लगभग 2 किलोमीटर है। ग्रामीण क्षेत्र में कुल मिलाकर अभी अवस्थापना सुविधाओं की कमी है।

ग्रामीण सड़कें

परिवहन के साधन विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं का बाजार विस्तृत कर उत्पादन बढ़ाने में सहायता करते हैं। गतिशीलता बढ़ाने, उत्पादन प्रक्रम को सुगम बनाने, कच्च पदार्थों को उत्पादन स्रोतों तक पहुंचाने तथा कृषि और औद्योगिक उत्पादन को उपभोग स्थानों तक पहुंचाने के लिए परिवहन व्यवस्था का विकसित होना आवश्यक है। परिवहन के साधन पिछड़े और दूरस्थ क्षेत्रों के विकास की नवीन संभावनाएं उत्पन्न करते हैं। यह वैचारिक और भावनात्मक अनुकूलन में योगदान करता है। परिवहन साधनों का विकास करोड़ों लोगों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रोजगार प्रदान कर अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या का निदान करता है। भारत में योजनाकाल में सड़कों का तीव्र प्रसार हुआ है। ग्रामीण सड़कों का निर्माण राजकीय क्षेत्र के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, 1974 का अंग है। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत यह लक्ष्य रखा गया है कि 1500 या इससे अधिक जनसंख्या वाले सभी गांवों को तथा 1000 से 1500 तक आबादी वाले 50 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़क से जोड़ दिया जाए। पर्वतीय, जनजातीय, रेगिस्तानी तथा तटवर्ती और अन्य दुर्गम स्थानों में कम जनसंख्या वाले गांवों को भी सड़कों से न जुड़े हुए 500 या उससे अधिक आबादी वाले (जनजातीय एवं रेगिस्तानी क्षेत्र में 250 आबादी वाले) सभी गांवों को दसवीं योजना के अंत तक पक्की सड़क से जोड़ने के लिये दिसंबर, 2000 में योजना आरंभ की गयी। यह सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में चलायी जा रही है। राष्ट्रीय ग्रामीण सड़क विकास अभिकरण (एन.आर.आर.डी.ए.) इस कार्यक्रम के लिये क्रियात्मक एवं प्रबंधकीय सुविधा प्रदान करता है।

ग्रामीण सड़कों का निर्माण भारत निर्माण योजना का अंग है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का प्रसार भारत निर्माण योजना के भौतिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिये किया गया है। भारत निर्माण योजना का लक्ष्य है कि 2008–09 तक 1000 से अधिक आबादी वाले सभी गांवों तथा पर्वतीय और जनजातीय क्षेत्रों में 500 से अधिक आबादी वाले सभी गांवों को सर्वकालिक सड़कों से जोड़ा जाये। यह माना जा रहा है कि इससे भारतीय गांवों को बाजार अर्थव्यवस्था में लाने में सहायता प्राप्त होगी। अभी बहुत से गांवों को सर्वकालिक सड़कों से जोड़ा जाना बाकी है। साथ–साथ जिन गांवों को सर्वकालिक सड़कों से जोड़ा जा चुका है, उनका रख–रखाव खराब होने और सड़कों पर टूट–फूट हो जाने तथा खराब बने रहने से सड़क बनाने का वास्तविक उद्देश्य, गांवों को बाजार अर्थव्यवस्था

में सम्मिलित करना और गांवों में गतिशीलता तथा संबंधिता बढ़ाना, पूरा नहीं हो पाता है। सड़कों का रख–रखाव ठीक न होने और टूट–फूट से समय की बर्बादी के अतिरिक्त परिवहन साधनों में भारी घिसावट व्यय और मरम्मत व्यय आता है। यह अनुमान किया गया है कि सड़क मरम्मत पर व्यय होने वाला एक रुपया सवारियों की परिचालन लागत में तीन रुपये की कमी करता है। बारहवें वित्त आयोग ने इस समस्या को अत्यंत गंभीरता से लिया और 2006–07 से 2009–10 के लिये सड़कों की मरम्मत और रख–रखाव के लिये 1500 करोड़ रुपये स्वीकृत करने की संस्तुति की। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण सड़कों के लिये उच्चवरीयता की नीति जारी रखी जायेगी। ग्यारहवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र में कहा गया है कि योजनाकाल में शेष बचे 1.72 लाख गांवों में से अधिकांश गांवों को सर्वकालिक सड़कों से जोड़ दिया जायेगा।

ग्रामीण विद्युतीकरण

ग्रामीण विकास प्रक्रिया में ग्रामीण विद्युतीकरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल कृषि विकास बल्कि ग्रामीण औद्योगिक और व्यावसायिक क्रियाओं के प्रसार के लिये आवश्यक है। यह दिन प्रतिदिन के कार्यों को सुगम बनाता है। ग्रामीण क्षेत्र में पेय जल आपूर्ति और ग्रामीण संबंधिता सुनिश्चित करने के लिए समान ग्रामीण विद्युतीकरण आवश्यक है। इस कारण योजना आरंभ के समय से ही ग्रामीण विद्युतीकरण पर ध्यान केन्द्रित किया जाता रहा है। भारत में 1991 की जनगणना के अनुसार कुल 5,87,000 गांव हैं। विद्युतीकरण की वर्तमान परिभाषा के अनुसार यदि गांव की राजस्व सीमा के भीतर किसी आबादी में किसी उद्देश्य से विद्युत प्रयोग की जाती है तो उसे विद्युतीकृत गांव माना जाता है। विद्युतीकरण की वर्तमान परिभाषा के अनुसार नवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक लगभग 5 लाख गांवों का विद्युतीकरण किया जा चुका है। इस प्रकार लगभग 87,000 गांवों का विद्युतीकरण किया जाना है। देश के 13 राज्यों ने अपने 100 प्रतिशत गांवों के विद्युतीकृत होने की घोषणा की है। जिन गांवों का अभी विद्युतीकरण होना है वे मुख्यतः असम, अरूणाचल प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, मेघालय, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल है। उपरोक्त परिभाषा के अनुसार यद्यपि देश के 86 प्रतिशत गांवों का विद्युतीकरण किया जा चुका है। परंतु अभी भी इन गांवों में उत्पादक आधारिक जरूरतों के लिये विद्युत प्रयोग अत्यंत सीमित है। अभी देश के 44 प्रतिशत परिवारों को विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराया गया है, 56 प्रतिशत परिवारों को विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराया जाना है।

ग्रामीण विद्युतीकरण की उपरोक्त परिभाषा से ग्रामीण विद्युतीकरण का वास्तविक लक्ष्य नहीं पूरा हो पाता है। गांव का विद्युतीकरण होने पर भी गांव में विद्युत उपयोग सीमित है। अतः ग्रामीण विद्युतीकरण की परिभाषा में इस प्रकार का संशोधन अपेक्षित है जिसके आधार पर किसी गांव को तब ही विद्युतीकरण माना जाये जब उस गांव में एक न्यूनतम संख्या में विद्युत कनेक्शन दिया जा चुका हो । अब विद्युत कनेक्शन बढ़ाने की आवश्यकता है। भारत निर्माण योजना के अंतर्गत सभी अविद्युतीकृत गांवों का विद्युतीकरण कर दिया जायेगा। ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में ग्रामीण विद्युत अवस्थापना (रूरल इलेक्ट्रीसिटी इंफ्रास्टक्चर) और ग्रामीण विद्युतीकरण की एक योजना अप्रैल, 2005 से आरंभ की गयी है ताकि अगले 4 वर्षों में सभी ग्रामीण परिवारों को विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराया जा सके।

दूर संचार

दूर संचार एक प्रमुख अवस्थापना है। कई अन्य अवस्थापनागत सुविधाओं की क्रियाशीलता दूर संचार की सुविधा पर निर्भर हैं। हाल के वर्षों में दूर संचार की सुविधा में क्रांतिकारी सुधार हुआ है। कुल टेलीफोन कनेक्शनों की संख्या 1999 में 22.9 मिलियन थी जो दिसम्बर, 2005 में 125 मिलियन हो गई। टेलीफोन सघनता प्रति 100 जनसंख्या पर 1999 में 2.32 थी जो दिसम्बर 2005 तक बढ़कर 11. 32 हो गयी। यह अनुमान है कि टेलीफोन की कुल संख्या 2007 के अंत तक बढ़कर 250 मिलियन हो जायेगी। दूर संचार सुविधा बढ़ाने के उद्देश्य से 1999 में नयी दूर संचार नीति घोषित की गयी। इसका मुख्य उद्देश्य कम कीमत पर प्रभावी दूर संचार सुविधा उपलब्ध कराना है। बेसिक टेलीफोन में राजकीय क्षेत्र और मोबाइल फोन में निजी क्षेत्र की प्रधानता है। राजकीय क्षेत्र अपनी भागीदारी बढ़ाने की दृष्टि से नयी और आकर्षक योजनायें लागू कर रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में दूर संचार सुविधा बढ़ाने के लिये राजकीय और निजी क्षेत्र प्रयासरत हैं। दिसंबर 31, 2005 तक देश के 5,39,572 गांवों को 'विलेज पब्लिक टेलीफोन' से जोड़ा जा चुका है। भारत निर्माण योजना के अंतर्गत नवंबर, 2007 तक 66822 अतिरिक्त गांवों को 'पब्लिक टेलीफोन' से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। टेलीफोन की स्थानीय और दूर की टेरिफ दरों में लगातार कमी की जा रही है। निजी क्षेत्र में विदेशी विनियोग की राशि लगातार बढ़ रही है। दूर संचार के क्षेत्र में सितंबर, 2005 तक कुल 41551 करोड़ रुपये का विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग स्वीकृत किया गया है। देश में पोस्टल सेवाओं का वृहद तंत्र विद्यमान है। यह विश्व की पोस्टल सेवाओं का सबसे बड़ा तंत्र है। पोस्टल सेवाओं में इलेक्ट्रानिक माध्यमों का प्रयोग बढ़ाकर इसे अधिक प्रभावी और दूरस्थ क्षेत्रों के लिये सुलभ किया जा रहा है।

शिक्षा एवं स्वास्थ्य

शिक्षा का प्रसार और स्वास्थ्य व्यक्ति की गुणवत्ता और कार्यक्षमता में वृद्धि करता है। यह व्यक्ति के जीवन को अधिक सार्थक और समाजोपयोगी बनाती है तथा रोजगार अवसरों तक व्यक्ति की पहुंच बढ़ाती है। शिक्षा अत्यंत समर्थ समानीकरण घटक है। नियोजन आरंभ के समय ग्रामीण क्षेत्र में शैक्षिक और स्वास्थ्य सेवाओं की आपूर्ति अत्यंत कम थी। परिणामतः साक्षरता दर अत्यंत कम थी। योजनाकाल में ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षण संस्थाओं की संख्या बढ़ी है। उच्च प्राविधिक और चिकित्सीय शिक्षा उपलब्ध कराने वाले संस्थानों में ग्रामीण युवकों का समावेश बढ़ा है। भारत

में 1951 में कुल साक्षरता दर मात्र 18.3 प्रतिशत थी जो 2001 में 64.8 प्रतिशत हो गयी। महिलाओं की साक्षरता दर 1951 में मात्र 8.9 प्रतिशत थी जो 2001 में 54.2 प्रतिशत हो गयी। शैक्षिक प्रसार की दृष्टि से नवंबर, 2000 में 'सर्वशिक्षा अभियान' और 2003–04 से 'बालिकाओं में विशेष रूप से शिक्षा कार्यक्रम' आरंभ किया गया। सर्वशिक्षा अभियान का उद्देश्य वर्ष 2010 तक 6–14 वर्ष के सभी बच्चों को उपयोगी और समर्थ शिक्षा उपलब्ध कराना है।

ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधाओं का योजनाकाल में तीव्र प्रसार हुआ। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की कुल संख्या 1951 में केवल 725 थी। इनकी संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई और मार्च, 2003 में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, उपकेन्द्रों और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 1, 63, 195 हो गयी। इसी प्रकार स्वास्थ्य रक्षा के माध्यमों में उल्लेखनीय वृद्धि हुयी है। स्वास्थ्य सेवाओं के प्रसार से हैजा, चेचक, प्लेग, टी. बी. जैसी भयानक संक्रामक बीमारियों पर नियंत्रण पा लिया गया है। मलेरिया की रोकथाम और निदान के प्रभावी उपाय किये गये हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002 का मुख्य उद्देश्य जन सामान्य के लिये उत्तम स्वास्थ्य उपलब्ध कराना है। इसी दृष्टि से प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना भी आरंभ की गयी। अब इनका पुनः प्रसार किया जा रहा है। तथापि अभी स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है जिसके कारण जीवन की गुणवत्ता और कार्यक्षमता प्रभावित होती है। स्वास्थ्य सेवाओं के संदर्भ में भारत कई पड़ोसी देशों से पीछे है। इसका विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। कर्मचारियों की कमी, कुशलता में कमी, दवाओं की कमी, तटस्थ दृष्टिकोण आदि के कारण ग्रामीण स्वास्थ्य सेवायें अपेक्षित स्तर तक नहीं हो पाती हैं। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि तक के लिये एक सात वर्षीय 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' आरंभ किया गया है। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में प्रभावी स्वास्थ्य सेवाओं के अंतराल को कम करना है। ग्रामीण स्वच्छता, पेयजल आपूर्ति आदि कार्यक्रमों को ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य के लिये जिला योजना में समन्वित किया जायेगा।

ग्रामीण आवास

भोजन और वस्त्र के साथ आवास मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकता है। यह व्यक्ति के जीवन को आरामदायक, स्वस्थ और स्तरीय बनाता है तथा उसके रहन–सहन के स्तर की गुणवत्ता में वृद्धि करता है। देश के ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में आवासीय व्यवस्था की लगातार कमी बनी है। ग्रामीण क्षेत्र में यह समस्या अधिक जटिल है। ग्रामीण क्षेत्र कें अधिकतर मकानों में सम्यक प्रकाश और हवा की सुविधा न होने के कारण वे अस्वास्थ्यकर हैं। ग्रामीण क्षेत्र में इस समस्या के निराकरण हेतु प्रयास हो रहा हैं। इस हेतु 'इंदिरा आवास योजना' 1985–86 से आरंभ की गयी। इस योजना के अंतर्गत आरंभ में ग्रामीण क्षेत्र में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन–जाति के परिवारों हेतु आवास बनाये जाते थे। इस योजना को 1989 में 'जवाहर रोजगार योजना' में मिला दिया गया। परंतु इसे 1996 में ग्रामीण गरीब परिवारों के लिये आवास कार्यक्रम के रूप में अलग कर दिया गया। देश में 1998 में राष्ट्रीय आवास एवं पुनर्वास नीति घोषित की गयी और तदनुसार इंदिरा आवास योजना में सुधार किया गया। देश में 1997–98 से 2001–02 की अवधि के लिये 109.53 लाख मकानों की आवश्यकता आंकी गयी थी जबकि इस अवधि में 45.0 लाख मकान बनाये गये थे। तथापि यह उपलब्धि आठवीं योजना के 20 लाख मकानों के निर्माण से बहुत अधिक थी। अब आवासीय एवं नगरीय विकास निगम ने अपनी क्रियाविधि का प्रसार ग्रामीण क्षेत्र तक कर दिया है और वहां आवास निर्माण हेतु कम ब्याज पर उधार देता है। भारत निर्माण योजना के अंतर्गत 2005 से 2009 की अवधि में ग्रामीण गरीबों के लिये 60 लाख आवास बनाने का लक्ष्य रखा गया है। ग्रामीण क्षेत्र में आवासीय समस्या अत्यंत कठिन हैं। उपलब्ध आवासीय आंकड़ों के अनुसार देश में 31 मार्च, 2005 तक 2.47 करोड़ मकानों की कमी थी। इसमें 1.88 करोड़ मकानों की कमी ग्रामीण क्षेत्र में है। यह अनुमान किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्र में केवल 36 प्रतिशत मकान पक्के हैं। शेष 84 प्रतिशत कच्चे मकानों के बार–बार मरम्मत की जरूरत पड़ती है। कई बार उनको पूरा नया बनाना पड़ता है। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में आवास निर्माण की आवश्यकता पर अधिक ध्यान देने की जरूरत है।

ग्रामीण अवस्थापना एवं भारत निर्माण कार्यक्रम

भारत निर्माण कार्यक्रम 2005 में आरंभ किया गया। इसके अंतर्गत अधिक अंतराल वाले 07 अवस्थापना क्षेत्रों का चयन किया गया है। यह समयबद्ध आधार पर 4 वर्षों (2005–2009) में ग्रामीण

कतिपय देशों में स्वास्थ्य सुविधाओं के सूचक तत्व

क्रम	मद	भारत	श्रीलंका	चीन	वियतनाम
1.	शिशु मृत्युदर (प्रति 1000 जीवित जन्म पर)	60	13	30	19
2.	पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्युदर (प्रति 1000 जीवित जन्म पर)	87	15	37	23
3.	जन्म के समय स्वास्थ्य प्रदाता कुशल कर्मचारियों द्वारा दी गयी सेवा (प्रतिशत में)	47. 6	97	97	85
4.	मातृत्व मृत्युदर (प्रति 1,00,000 शिशु जन्म पर)	407	92	56	130
5.	चेचक से पूर्णतः सुरक्षित एक वर्ष के बच्चे (प्रतिशत में)	58	99	84	93

भारत निर्माण योजना के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्य

1. सिंचाई	10 मिलियन हेक्टेयर सिंचाई क्षमता का सृजन।
2. ग्रामीण सड़क	1000 से अधिक जनसंख्या वाले और पर्वतीय तथा जनजातीय क्षेत्रों में 500 से अधिक जनसंख्या वाले शेष बचे सभी (66802) गांवों को सर्वकालिक सड़कों से जोड़ना।
3. ग्रामीण आवास	ग्रामीण गरीबों के लिये 60 लाख आवासों का निर्माण।
4. ग्रामीण जल आपूर्ति	बचे हुये सभी 55067 गांवों के लिये पेय जल की व्यवस्था करना।
5. ग्रामीण विद्युतीकरण	सभी बचे हुए 1,25,000 गांवों का विद्युतीकरण करना और गरीबी रेखा से नीचे के सभी 23 मिलियन परिवारों को विद्युत कनेक्शन देना।
6. ग्रामीण टेलीफोन	सभी बचे हुए 66822 गांवों को पब्लिक टेलीफोन से जोड़ना।

अवस्थापना निर्माण की एक कार्य योजना हैं। भारत निर्माण कार्यक्रम के अंतर्गत सिंचाई, ग्रामीण सड़क, ग्रामीण आवास, ग्रामीण जल आपूर्ति, ग्रामीण विद्युतीकरण और ग्रामीण दूर संचार के लिये कार्य प्रस्तावित है। इन सबके लिये 2005–09 की अवधि हेतु निम्नवत् विशिष्ट लक्ष्य रखे गये हैं। इनके अतिरिक्त रोजगार अवसरों में वृद्धि को भारत निर्माण योजना के अंतर्गत सम्मिलित किया गया है।

यद्यपि अवस्थापना सृजन और ग्रामीण विकास के लिये पहले से ही विविध कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं तथापि अपरिहार्यता के परिप्रेक्ष्य में इसे समयबद्ध आधार पर लागू किया जा रहा है। इसके लिये संसाधन संग्रह केन्द्रों और राज्य सरकारों के बजट आवंटन, विदेशी सहायता, बाजार उधार और ग्रामीण अवस्थापना विकास फंड से प्राप्त करने का प्रावधान किया गया है। योजना आयोग द्वारा गठित एस.पी. गुप्ता समिति ने नगरीय अवस्थापना के साथ–साथ ग्रामीण अवस्थापना के विकास पर बल दिया और उल्लेख किया कि ग्रामीण अवस्थापना सुविधा का इस स्तर तक विकास किया जाना चाहिये ताकि देश के सभी गांव पक्की सड़क और दूर संचार की सुविधा से जुड़ जाये, सभी ग्रामीण परिवारों को विद्युत और पेयजल की आपूर्ति सुनिश्चित हो जाये, सभी बच्चों को गुणवत्तायुक्त प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा उपलब्ध हो सके और देश के सभी नागरिकों को चिकित्सीय सेवायें उपलब्ध हो सकें।

ग्रामीण क्षेत्र के सम्यक विकास में अवस्थापनागत सुविधाओं की कमी प्रमुख बाधा है। दसवीं पंचवर्षीय योजना की मध्यवर्ती समीक्षा में यह उल्लेख किया गया है कि भारत के विकास क्रम में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में अवस्थापना सुविधाओं की अपर्याप्तता एक प्रमुख बाधक तत्व है। अवस्थापना विकास के लिये भारी विनियोग और दृढ़ प्रयास की आवश्यकता है। दसवीं पंचवर्षीय योजना की मध्यावधि समीक्षा में यह उल्लेख किया गया है कि दसवीं योजनाकाल में अवस्थापना क्षेत्र के लिए 1,108,800 करोड़ रुपये के विनियोग की आवश्यकता है। अवस्थापना क्षेत्र पर प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गठित समिति ने अनुमान लगाया है कि सन् 2012 तक राष्ट्रीय राजमार्गों के लिये 1,72,000 करोड़ रुपये, बन्दरगाहों के लिये 50,000 करोड़ रुपये तथा हवाई अड्डों के लिये 2010 तक 40,000 करोड़ रुपये विनियोग की आवश्यकता होगी। स्पष्टतः इतने भारी विनियोग के लिए केवल सार्वजनिक क्षेत्र पर निर्भर करना व्यावहारिक न होगा। अवस्थापना क्षेत्र की आधारित जरूरत और भारी विनियोग की आवश्यकता देखते हुये 10वीं योजना में इसके विकास हेतु कई कदम उठाये गये हैं। इसमें सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी अवस्थापना सुविधाओं के निर्माण और सुधार में कई विकसित और विकासशील देशों में उपयोगी हुई है। भारत में ग्रामीण और नगरीय अवस्थापना सृजन और सुधार में बी.ओ.टी., बी.ओ.ओ.टी. और बी.ओ.एल.टी. के माध्यम से निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ाई जा सकती है। आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया आरंभ होने के बाद विभिन्न अवस्थापनागत सुविधाओं यथा सड़क, बंदरगाह, दूर संचार, विद्युत, आवास निर्माण, हवाई अड्डे आदि में निजी निवेश बढ़ा है। सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी ग्रामीण अवस्थापना विकास में सहायक है।

(लेखक इलाहबाद डिग्री कॉलेज में अर्थशास्त्र विभाग में रीडर हैं।)

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कितना उपयोगी है ऊंटनी का दूध

डॉ. डी.डी. ओझा

अफ्रीकी एवं अरब देशों में विश्व की कुल आबादी के दो तिहाई ऊंट या उष्ट्र पाये जाते हैं। हमारे देश में मुख्यतः बीकानेरी, जैसलमेरी, मारवाड़ी, कच्छी और मेवाड़ी नस्ल के ऊंट पाये जाते हैं जो कि मुख्य रूप से बोझा ढोने, खेती के कार्य जैसे– हल चलाने, पानी निकालने, बुवाई करने, पाटा चलाने तथा सवारी आदि के काम में आते हैं। ऊंटनी का दूध राजस्थान, गुजरात व हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत समय से उपयोग में लाया जाता रहा है। ग्रामीण अंचल के लोग ऊंटनी के दूध की चाय, खीर, घेवर व अन्य पदार्थ के अलावा कच्चा या उबालकर उपयोग में लाते हैं।

ऊंटनी का दुग्धकाल 14–16 महीनों का होता है और औसत दूध उत्पादन 3–6 किग्रा. प्रतिदिन होता है। ऊंटनी के दूध का स्वाद उनके द्वारा उपयोग में लाए गए आहार की किस्म पर निर्भर करता है। मुख्यतया यह पाया गया है कि ऊंटनी के दूध का स्वाद हल्का लवणीय होता है तथा इसके दूध का पी.एच. मान 6.5 से 6.6 तक होता है। ऊंटनी के दूध में औसतन 2.25 प्रतिशत वसा, 2.65 प्रतिशत प्रोटीन, 8.62 से 10.9 प्रतिशत कुल ठोस पदार्थ, 0.95 प्रतिशत राख एवं 4.20 प्रतिशत विटामिन 'सी' पाया जाता है। इसके दूध में केसीन की मात्रा 2.90 से 3.00 प्रतिशत तक होती है।

रासायनिक संघटन

ऊंटनी के दूध में प्रोटीन की मात्रा गाय के दूध के लगभग समान होती है। इसके दूध में अमीनो अम्लों की मात्रा अन्य पशुओं से भिन्न होती है। एस्पारटिक तथा ग्लूटेमिक अम्ल की मात्रा अन्य पशुओं के समान होती है। ऊंटनी के दूध में लेक्टएलब्युमिन तथा लेक्टोग्लोब्युलिन घुलनशील अवस्था में पाई जाती है। इनको "सीरम प्रोटीन्स कहते हैं तथा इनकी मात्रा 0.7 से 1.0 प्रतिशत तक होती है, जबकि गाय के दूध में इनकी मात्रा 0.50 से 0.65 प्रतिशत तक होती है।

ऊंटनी के दूध में वसा व जल विलेय दोनों ही विटामिन होते हैं। नियासिन व विटामिन 'ई' की मात्रा गाय के दूध से अधिक मात्रा में पाई जाती है। गाय के दूध में इनकी मात्रा क्रमशः 0.08 व 0.1 मिग्रा. प्रतिशत होती है।

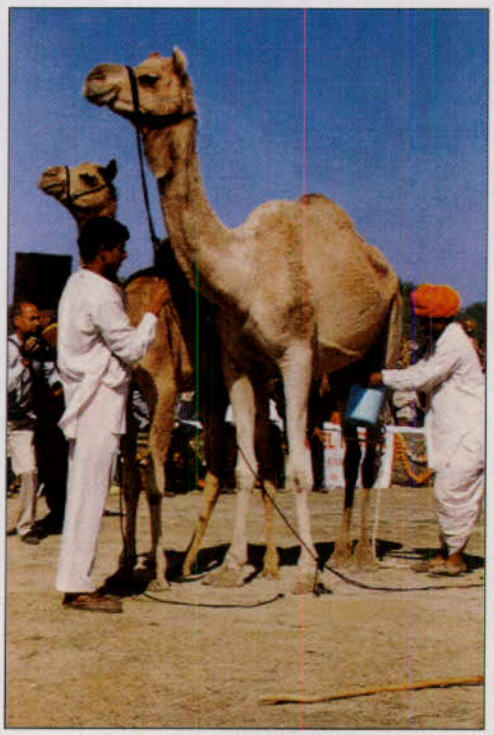

बाल्टी में ऊंटनी का दूध निकालता हुआ ग्रामीण

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर के वैज्ञानिकों (डॉ. मोहनसिंह, डॉ राघवेन्द्र सिंह, डॉ. एफ. सी टूटेजा आदि) ने अपने अनुसंधान द्वारा ज्ञात किया है कि ऊंटनी के एक किलोग्राम दूध में 40–50 मिग्रा. 'विटामिन–सी ' पाया जाता है, जो कि अन्य पशुओं की तुलना में बहुत अधिक है। मनुष्य विटामिन–'सी' को संश्लेषित नहीं कर सकता है और इसकी कमी से बहुत से रोग उत्पन्न हो सकते हैं। ऊंटनी के दूध के लगातार उपयोग द्वारा विटामिन – 'सी' की कमी को दूर किया जा सकता है।

ऊंटनी के दूध में लगभग 9.5 ग्राम खनिज प्रति लीटर पाए जाते हैं जिसमें सोडियम, पोटाशियम, क्लोराइड, मैग्नीशियम, कैल्शियम, फास्फेट, सिट्रेट आदि प्रमुख हैं। दूध में उपस्थित खनिज पदार्थों का पोषण में भी बड़ा महत्व है। ये तत्व दांत एवं हड्डी के निर्माण में सहायक होते हैं। ऊंटनी के दूध में जस्ते और तांबे की मात्रा भी गाय के दूध से अधिक होती है।

औषधीय उपयोगिता

बीकानेर स्थित राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र के प्रबुद्ध वैज्ञानिकों ने स्थानीय सरकारी चिकित्सालय के समन्वय से क्षय रोग निवारण में रोगियों पर विभिन्न प्रयोग किए जिसमें भोजन, दवा के साथ ऊंटनी का दूध एक लीटर प्रतिदिन देकर प्रेक्षण लिए।

ऊंटनी के दूधवाले रोगियों में अन्य रोगियों की तुलना में हीमोग्लोबिन में वृद्धि के साथ श्वेत रक्त कणिकाओं में कमी प्रेक्षित की गई। ऊंटनी के दूध में मुक्त कैल्शियम की मात्रा बहुत अधिक होती है तथा लाइसोजाइम किण्वक की मात्रा भी प्रचुर होती है, जोकि क्षय रोग के जीवाणुणों की वृद्धि को रोकने में सहायक होती है।

इसी प्रकार मधुमेह (टाइप–I) रोग के निवारण के संबंध में भी ऊंटनी के दूध की उपयोगिता देखी जा चुकी है। अनुसंधान परिणामों से विदित हुआ है कि लगातार छहः माह से उपयोग में लाने वाले रोगियों में इंजेक्शन द्वारा प्रतिदिन दी जा रही इन्सुलिन की मात्रा में 40 से 60 प्रतिशत की कमी देखी गई। इस आधार पर इस तथ्य की पुष्टि

होती है कि ऊंटनी का दूध मधुमेह टाईप– I में बहुत उपयोगी होता है।

उष्ट्र दुग्ध उत्पाद

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर के वैज्ञानिकों ने ऊंटनी के दूध से दही, सुगंधित/फ्लेवर्ड दूध, कुल्फी, लस्सी, सॉफ्ट पनीर (चीज) तथा पनीर पकोड़ा जैसे व्यंजन बनाए हैं जो लोगों को बहुत पंसद है।

ऊंटनी के दूध को बिना पाश्चरीकरण या उबाले 9–10 घंटे तक रखा जा सकता है और अगर दूध में 1:1 पानी मिलाया जाये तो दूध 12 से 13 घंटे तक खराब नहीं होता है। ऊंटनी के दूध को प्रशीतक (रेफ्रीजरेटर) में 15 से 20 दिनों तक रखा जा सकता है और इससे दूध की गुणवत्ता में कोई अंतर नहीं आता है। शुष्क मरू क्षेत्रों में वर्ष के अधिकांश महीनों में गरमी पड़ती है और अन्य दुधारू पशुओं का दूध खराब हो जाता है। ऊंटनी के दूध में इन गुणों को देखते हुए वैज्ञानिकों ने ऊंटनी के दूध से चाय व कॉफी तैयार करने पर शोध कार्य किया है।

चाय बनाने के लिए एक चम्मच चीनी तथा आधा चम्मच चाय की पत्ती का प्रयोग किया गया, जबकि कॉफी के लिए एक चम्मच चीनी व एक चौथाई चम्मच कॉफी पाउडर उपयोग में लाया गया। चाय और कॉफी बनाने के पश्चात् अलग–अलग लोगों को पिलाई गई तथा चाय व कॉफी के सुवास, स्वाद और स्वीकार्यता के बारे में उनके विचार लिए गए। लोगों की राय अनुसार अधिकतर लोगों को 1:2 के अनुपात में दूध व पानी की मिश्रित चाय पसंद आयी। अतः यह विदित हुआ कि ऊंटनी के दूध का चाय एवं कॉफी बनाने में सफलता से उपयोग किया जा सकता है।

ऊंटनी के दूध से दही

दही में उपस्थित स्ट्रेप्टोकोकाई तथा लैक्टो–बैसीलाई नामक जीवाणुओं के लाभकारी गुणों से इसकी पोषण महत्ता बहुत बढ़ जाती है। दही में विटामिन–बी दूध से अधिक मात्रा में पाया जाता है।

ऊंटनी का शुद्ध ताजा व छना हुआ दूध, जिसका पी.एच. मान 6.54 तथा अम्लता 0.138 प्रतिशत, पानी 91.09 प्रतिशत तथा कुल ठोस पदार्थ 8.9 प्रतिशत लिया गया। दूध को 15 से 25 मिनट तक उबाल कर तुरंत 30–37 सें. तक ठंडा करके उसमें जामन 1–3 प्रतिशत की दर से मिलाने पर 20–22 घंटे के पश्चात् दही तैयार हो जाता है। ऊंटनी के दूध से प्राप्त दही एवं अंतर्राष्ट्रीय डेयरी फेडरेशन के दही के मानक इस प्रकार हैं –

ऊंटनी के दूध के दही में विद्यमान अवयव		अंतर्राष्ट्रीय डेयरी फेडरेशन द्वारा दही के मानक
पानी	83–84 प्रतिशत	82–86 प्रतिशत
कुल ठोस	16–17 प्रतिशत	14–18 प्रतिशत
वसा	3–3.3 प्रतिशत	1–10 प्रतिशत
प्रोटीन	4.08–4.76 प्रतिशत	4–6 प्रतिशत
अम्लता	0.6–0.8 प्रतिशत	0.62–1.1 प्रतिशत

उपर्युक्त आंकड़ों से विदित होता है कि ऊंटनी के दूध से प्राप्त दही में पौष्टिकता स्तर अंतर्राष्ट्रीय मानक के अनुरूप है।

ऊंटनी के दूध से त्वचा क्रीम

ऊंटनी के दूध की वसा से प्राकृतिक खाद्य तथा सौन्दर्य उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। इसकी दुग्ध वसा अन्य पशुओं की दुग्ध वसा से भिन्न है। ऊंटनी की दुग्ध वसा गोलिका की औसत मोटाई 2.70 माइक्रांन होती है जो कि तुलनात्मक रूप में बकरी, भेड़, गाय एवं भैंस से छोटी तथा दूध में समान रूप से अधिक मिश्रित रहती है। ऊंटनी के दूध की वसा गोलिका की विलक्षण विशेषता यह है कि इसका सतह क्षेत्र 2.29 मी.^{2}/ग्राम वसा, अन्य डेयरी पशुओं की तुलना में अधिकतम होता है तथा यह तुलनात्मक रूप में क्रीमिंग प्राचल से अधिक गुण रखता है। इसमें वसा/ठोस औसत अनुपात 31.6 है, जो कि भैंस में 40.9 की तुलना में सार्थक रूप से कम है।

कुछ सूक्ष्म खनिज तत्वों की अधिक मात्रा, आवश्यक वसा अम्लों, प्रति–ऑक्सीकारक गुणधर्म एवं छोटी गोलिका वसा तथा इसकी गुणवत्ता को देखते हुए 'उष्ट्र दुग्ध त्वचा क्रीम' बनाई गयी। तैयार उष्ट्र क्रीम मानव त्वचा देखभाल क्रीम के रूप में मूल्यांकित की गई। इस हेतु अलग–अलग आयु के बच्चों, स्त्री और पुरुषों को त्वचा पर क्रीम लगाने हेतु दी गई। तीन महीने बाद क्रीम को प्रयुक्त करने वालों से इसकी गुणवत्ता के संबंध में जानकारी ली गई। वैज्ञानिकों ने अपने अन्वेषण में पाया कि त्वचा की चमक एवं चिकनेपन में क्रीम के उपयोग से निखार आया तथा सूखी/खुरदरी त्वचा को लंबे समय तक मुलायम बनाए रखने में भी यह त्वचा क्रीम कारगर सिद्ध हुई। क्रीम को दिन में दो बार प्रयुक्त करना लाभदायक देखा गया तथा इसको लगाने से त्वचा पर तेलीय सतह भी नहीं पाई गई।

अतः मरूस्थल का जहाज "ऊंट" तो एक है परन्तु इसके उपयोग अनेक हैं, यथा इसके बाल, हड्डी एवं दांत से कई उत्पाद तैयार किए जाते हैं। ऊंट का उपयोग न केवल परिवहन वरन् अनेकानेक कार्यों में होता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इनके संरक्षण की नितांत आवश्यकता है।

(लेखक वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विज्ञान लेखक हैं)

ग्रामीण भारत में बाल श्रम : दशा एवं दिशा

डॉ. भंवर लाल हर्ष

यह खेद का विषय है कि स्वतन्त्रता–प्राप्ति के 60 वर्षों के बाद भी भावी पीढ़ी बाल श्रम के रूप में शोषण का शिकार है। बाल श्रमिक अल्पायु में ही रोजगार की खतरनाक परिस्थितियों का जोखिम सहन करते हैं। कई–कई घण्टों काम करने के बाद उन्हें नाम मात्र का अल्प वेतन मिलता है। शिक्षा को छोड़ने के लिए बाध्य होकर अपनी आयु से कहीं अधिक दायित्वों को निभाना पड़ता है। उस आयु में दुनियादार बनकर उनकी आयु–समूह के अन्य बालकों को अपने माता–पिता/संरक्षक की सुरक्षा के कवच को छोड़ना बाकी है, वे कभी भी नहीं जान पाते कि वस्तुतः बचपन क्या है?

भारत में बालश्रम की वर्तमान स्थिति एवं प्रकृति

हमारे देश की कुल आबादी का 15.42 फीसदी बच्चे हैं। विश्व के कुल बाल श्रमिकों में लगभग 20.25 प्रतिशत केवल भारत में ही है। माइरन वीनउर ने अपनी पुस्तक "द चाइल्ड एंड स्टेट इन इंडिया" में इस बात का खुलासा करने की कोशिश की है कि क्यों भारत के बच्चों एवं रोजगार के प्रति अन्य देशों की अपेक्षा एक अलग ढ़ंग का उपागम अपनाया गया है। भारत में अधिकांश कार्यरत बाल श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों में ही केन्द्रित हैं, जिनमें से लगभग 60 प्रतिशत दस वर्ष की आयु से कम हैं। इनमें से 23 प्रतिशत बच्चे व्यापार और व्यवसाय में तथा शेष 37 प्रतिशत घरेलू कार्यों में समा जाते हैं। नगरीय क्षेत्रों में उन बच्चों की संख्या, जो रेस्तरां और कैन्टीन में कार्यरत हैं, अथवा जो कूड़ा–करकट, चिथड़े, पॉलिथिन उठाने या माल की फेरी लगाने में लगे हैं, अनगिनत हैं, किन्तु उनका रिकार्ड प्राप्त नहीं है। वे बच्चे सबसे अधिक अभागे हैं, जो कि जोखिमयुक्त धन्धों / उद्यमों में लगे हैं। उदाहरणार्थ– तमिलनाडु के रामनाथपुरम् जिले के "शिवकासी" में माचिस और पटाखों की इकाइयों में लगभग 45,000 बच्चे कार्य करते हैं। उत्तर प्रदेश के "फिरोजाबाद" के ग्लास कारखानों में भी 45,000 बच्चे तथा गलीचे बनाने के कारखानों में एक लाख बाल श्रमिक कार्यरत हैं। बाल श्रमिकों की एक बड़ी संख्या "मुरादाबाद" के पीतल के बर्तनों के उद्योग में, मध्य प्रदेश के "मंदसौर" जिले के स्लेट निर्माण उद्योग में, "अलीगढ़" के ताला बनाने के उद्यम में, राजस्थान के "जयपुर" के बहुमूल्य पत्थरों की घिसाई में तथा जम्मू–कश्मीर और अनेक राज्यों में गलीचे बनाने में कार्यरत हैं।

भारत में बाल श्रम के प्रमुख कारण

भारत में लगभग 34 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति घोर गरीबी की दशा में जीवन – यापन कर रहे हैं। इन्हीं परिवारों में बाल श्रम की समस्या अधिक पायी जाती हैं। बच्चे निर्धनता व दरिद्रता के कारण नौकरी करने लगते हैं, क्योंकि उनकी कमाई के बिना, भले ही वह अत्यधिक कम हो , उनके परिवारों का जीवन–स्तर और भी गिर सकता है। उनमें से अनेकों के तो परिवार ही नहीं होते अथवा सहारे के लिए उनसे आशा नहीं कर सकते। इस सन्दर्भ में एक रोचक तथ्य यह भी है कि अधिकांश मालिक अपने दोष को छिपाने के लिए अनेक कुतर्क प्रस्तुत करते हैं। कुछ कहते हैं कि नौकरी उन्हें भूखा मरने से रोकती है, तो कुछ का कहना होता है कि वह उन्हें अपराध करने से रोकते हैं, जो कि नौकरी नहीं मिलने की दशा में वे करते। सरकारी अधिकारियों की दलील यह होती है कि बाल श्रमिकों का सम्पूर्ण उन्मूलन करना कठिन है, क्योंकि सरकार उन्हें पर्याप्त वैकल्पिक नौकरियां नहीं दे सकती है। समाज वैज्ञानिकों का मत है कि बाल श्रम का प्रमुख कारण गरीबी ही है। बच्चे या तो अपने माता–पिता की आमदनी में वृद्धि करते हैं अथवा परिवार में वे अकेले ही वेतनभोगी या कमाऊ सदस्य होते हैं। देश में बाल श्रम का एक अन्य कारण यह भी है कि बाल श्रम सस्ते मजदूर प्राप्त करने के उद्देश्यवश कतिपय निहित स्वार्थों के द्वारा जानबूझकर पैदा किया जाता है। बाल श्रम के पक्ष में एक तर्क यह भी दिया जाता है इससे उद्यमों को लाभ मिलता है।

भारत में बाल श्रम की कानूनी स्थिति

भारत में बालश्रम की प्रथा काफी अरसे से चली आ रही है जिसे कम करने के लिए निरन्तर प्रयास किये जाते रहे हैं। आजादी से पहले भी अंग्रेजी शासन के दौरान ग्रामीण इलाकों में हजारों बच्चे खेतिहर मजदूरों के रूप में और विभिन्न उद्योगों में बाल मजदूरों के रूप में कार्य करते थे। उस समय पहली बार वर्ष 1881 में ब्रिटिश सरकार द्वारा मजदूरों के लिए "राजकीय श्रम आयोग" गठित किया गया। इससे भारतीय उद्योगों में बालश्रमिकों के व्यापक इस्तेमाल को एक बुराई के रूप में चिन्हित किया गया था। वर्ष 1901 में बनाये गये खदान अधिनियम में अंग्रेजी सरकार द्वारा 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों से काम लेना गैर कानूनी घोषित किया गया। इसके बाद वर्ष 1922 में कारखाना एक्ट बनाया गया जिसमें 15 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को बालक

माना गया और उनके काम करने की अवधि आधे घंटे के विश्राम सहित 6 घंटे की गई। शिशु श्रम से सम्बन्धित अधिनियम वर्ष 1933 में पारित किया गया जिसमें बच्चों को श्रमिक के रूप में नियुक्त करने पर सजा के भी प्रावधान किये गये।

बच्चों को देश में उनके अधिकार दिलाने के लिए संविधान में निम्नलिखित उपबंध बनाये गये हैं:– संविधान के अनुच्छेद 15 (3) द्वारा सरकार को बालकों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 23 बालकों के क्रय–विक्रय एवं उनके द्वारा गैर कानूनी तथा अनैतिक कार्य करने पर रोक लगाता है। साथ ही बालकों को भय दिखाकर या बिना पारिश्रमिक काम कराने को भी प्रतिबंधित करता है। संविधान का अनुच्छेद 24 जो, 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, खदानों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियोजित करने पर रोक लगाता है। संविधान का अनुच्छेद 39 (नीति निर्देशक तत्व) बच्चों के स्वास्थ्य एवं उनके शारीरिक विकास हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश देता है। अनुच्छेद 39 (ई) में सरकार को बच्चों के बचपन की रक्षा करने और यह सुनिश्चित करने के निर्देश दिये गये हैं कि उन्हें ऐसे कार्यों में न लगाया जाये, जो उनकी उम्र और स्वास्थ्य के लिए घातक हो।

बच्चों के अधिकारों को सुनिश्चित करने एवं उन्हें शोषण मुक्त करने हेतु सरकार ने 1949 में विभिन्न राजकीय विभागों एवं अन्य बालश्रमिकों की समस्याओं के अध्ययन हेतु 1979 में गुरुपदस्वामी समिति गठित की गयी। बाल श्रम प्रथा के उन्मूलन हेतु सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण प्रयास एक विस्तृत अधिनियम बनाकर किया गया, जिसे बाल श्रम निषेध एवं नियम, अधिनियम 1986 कहा जाता है। इसके अतिरिक्त बच्चों की पर्याप्त सुरक्षा और आवश्यक देखभाल को सुनिश्चित करने के लिए संसद द्वारा "बाल न्याय (बच्चों की सुरक्षा और देखभाल) अधिनियम, 2000" भी पारित किया गया है। जो "किशोर न्यायिक अधिनियम,1986" के स्थान पर बनाया गया है। इसमें किये गये प्रावधानों को बच्चों के अनुकूल बनाए जाने हेतु किशोर न्यास संशोधन विधेयक 2006 भी संसद द्वारा पास किया गया है जिसके अन्तर्गत विशेष रूप से किशोर अपराधियों के नाम व फोटो प्रकाशित या प्रसारित करने वालों पर 25 हजार रुपये तक दण्ड लगाये जाने का प्रावधान है। विपत्ति में फंसे हुए बच्चों को राहत पहुंचाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा "निःशुल्क चाइल्ड लाइन फोन सेवा" (1098) भी प्रारम्भ की गई है।

बच्चों के हित में कई और निर्णय भी लिये गये हैं जिसमें बच्चों को अनिवार्य रूप से शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु शिक्षा को बच्चों के मौलिक अधिकारों में शामिल करने संबंधी 93वां संविधान संशोधन संसद द्वारा पास किया गया, जिसमें 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ्त शिक्षा देने की बात कही गयी है। इसके अलावा अभिभावकों का यह कर्त्तव्य निर्धारित किया गया है कि वे अपने बच्चों को शिक्षा अवश्य दिलाएंगे।

भारत में बाल श्रम की अनुपालना हेतु प्रभावी उपाय

बाल श्रम की कुप्रथा के सम्बन्ध में कड़वी सच्चाई यह है कि आज भू–स्वामी से लेकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तक उत्पादन की लागत को कम करने के लिए किसी न किसी तरह सारे संसार में हो रहे बाल श्रमिकों के शोषण में भागीदार है। बाजार की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने की प्रवृति ने बाल मजदूरी की संस्कृति को जन्म दिया है। विकसित तथा विकासशील दोनों तरह के देश इसकी चपेट में है। हालांकि इसका इतिहास सभ्यता के शुरूआत से प्रारम्भ होता है। किन्तु वैश्वीकरण तथा औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया के तेज होने के बाद इसका रूप बदतर हो गया है। इसलिए हमारे शासन के तीनों अंगों को अब इसके लिए कानून बनाकर एवं उन कानूनों को लागू करने के लिए मात्र निरीक्षक एवं अधिकारी नियुक्त कर देने से इस विकट समस्या का निदान नहीं होगा। इसके लिए सरकार को एवं स्वयंसेवी संगठन, जन प्रतिनिधि, लोक सेवकों एवं निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र में कार्यरत सभी उपक्रमों को एक साथ समग्र रूप से इस समस्या के निदान के लिए आगे आना होगा और जो बालक इस समस्या से ग्रस्त हैं उनके लिए पुनर्भरण एवं पुनर्स्थापन जैसे प्रयास करने होंगे। तभी हम इस समस्या का कारगर निदान कर पायेंगे। इसके अलावा दुनिया के अन्य देशों में बच्चों से सम्बंधित बेहतर कानूनी प्रावधान भी हैं जिनका प्रयोग भी भारत में किया जाना चाहिए । इस सम्बंध में कुछ महत्वपूर्ण सुझाव इस प्रकार हैं:–

- भारत में बाल समस्या का समाधान करने के लिए बाल श्रम कानूनों की अनुपालना सुनिश्चित की जाये और उसके लिए एक प्रभावी तरीका यह भी है कि इन कानूनों के उल्लंघनकर्ताओं की सजा को और भी सख्त बनाया जाए।
- इन कानूनों में जहां भी निरीक्षण के प्रावधान नहीं है वहां उन्हें सम्मिलित किया जाए और एक निगरानी प्रकोष्ठ का गठन किया जाए।
- बाल श्रमिकों के हितों के बारे में सभी मालिकों के लिए आदेशात्मक प्रावधान कर दिया जाए कि वे बाल श्रमिक चाहे घरेलू नौकर हो या दुकान में कार्यरत् हो, इसके लिए बौद्धिक, व्यावसायिक व शैक्षणिक कल्याणार्थ एवं आवश्यक कदम उठाए जाएं।
- ब्रिटेन की तरह भारत में भी समाज कल्याण विभाग की देखरेख में एक "बच्चों का सुरक्षा रजिस्टर" होना चाहिए। इसके अलावा बच्चों के मामलों की खास जानकारी रखने वाले अधिवक्ताओं का एक समूह भी होना चाहिए।
- बच्चों के लिए लोकपाल नार्वे की तर्ज पर अगर इस तरह के आफिस खोले जाते हैं तो यह निश्चित तौर पर बच्चों की आवाज का काम करेगा। साथ ही यह बच्चों की बातें नीतियां

बनाने वालों तक पहुंचायेगा और ये देखेगा की ये नीतियां कानूनों में शामिल की जाती हैं या नहीं।

इस प्रकार की कानूनी व निरीक्षण व्यवस्था अपनाने पर बच्चों को शोषण व दुर्व्यवहार से बचाने में काफी सहायता प्राप्त हो सकती है तथा बच्चों को प्राप्त तथाकथित अधिकारों को वास्तविक अधिकारों में बदल कर उनका जीवन खुशहाल बनाया जा सकता है – क्योंकि बालश्रम की समस्या को आज कानूनी और मानवाधिकार संरक्षण की दृष्टि से देखने के साथ–साथ उसके मानवीय, सामाजिक और व्यावहारिक पहलू को देखे जाने की आवश्यकता है, ताकि इसका उपयुक्त हल निकाला जा सके।

(लेखक श्री गुरुनानक खालसा विधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय में व्याख्याता हैं)
ई–मेल : harshbhavarlal@rediffmail.com

हमारे आगामी अंक

दिसंबर 2007 अंक मानवाधिकार तथा एड्स पर केंद्रित है।

जनवरी 2008 अंक पर्यावरण तथा प्रदूषण पर केंद्रित है।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे । उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं ।

देश के शेष सभी जिलों के ग्रामीण क्षेत्र राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के दायरे में

भारत सरकार ने देश के शेष जिलों के सभी ग्रामीण क्षेत्रों में राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम (एनआरईजीए) का विस्तार करने का निर्णय लिया है। 02 फरवरी, 2006 को एनआरईजीए के अंतर्गत सर्वाधिक पिछड़े 200 जिले अधिसूचित किए गए थे। वित्त वर्ष 2007–08 में और 130 जिलों को इस अधिनियम के दायरे में लाया गया।

अधिनियम में प्रावधान था कि सितम्बर, 2005 में अधिसूचित होने के बाद इसे पांच वर्षों के अंदर पूरे देश में लागू कर दिया जाएगा लेकिन इस अधिनियम से ग्रामीण क्षेत्रों को खासकर ग्रामीण गरीबों को लाभ पहुंचाने की संभावनाओं को देखते हुए यह फैसला लिया गया है कि इस अधिनियम को अप्रैल 2008 से पूरे देश में लागू कर दिया जाए। इसके लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध कराई जाएगी तथा अधिसूचित जिले एनआरईजीए में शामिल होने के लिए तैयारियां शुरू कर देंगे। समय से पहले अधिनियम के सार्वभौमिकरण से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण गरीबों पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ा है और सरकार ग्रामीण गरीबों की हालत में सुधार के प्रति निर्णायक रूप से कटिबद्ध है।

7 सिंतबर, 2005 को अधिसूचित इस अधिनियम का उद्देश्य प्रत्येक वित्तीय वर्ष में रोजगार के इच्छुक उन लोगों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराकर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की जीवन–यापन सुरक्षा बढ़ाना है, जो अकुशल शारीरिक श्रम करने के लिए स्वेच्छा से तैयार हैं।

योजना से संबंधित सभी महत्वपूर्ण आंकड़ें वेब संचालित एमआईएस www.nrega.nic.in पर आम लोगों के लिए उपलब्ध हैं। मस्टर रोलों को भी पहली बार वेबसाईट पर रखा जा रहा है ताकि सभी लोग इसे देख सकें। **(पसूका)**

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र : दिल्ली सूचना भवन, सीजीओ, काम्प्लैक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003, हॉल न. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली– 110054; **मुंबई** 701 बी विंग, 7वीं मंजिल, केंद्रीय सदन बेलापुर, नवी मुंबई– 400614; **कोलकाता** 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कोलकाता–700069; **चेन्नई** 'ए' बिंग, राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई– 600090; **तिरुअनंतपुरम** प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस, तिरुअनंतपुरम – 695001; **हैदराबाद** ब्लॉक नं. 4 प्रथम तल, गृहकल्प काम्प्लैक्स, एम.जी. रोड, नामपल्ली, हैदराबाद–500001; **बंगलौर** प्रथम तल, एफ विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर –560034; **पटना** बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना–800004; **लखनऊ** हाल नं.1, द्वितीय तल, केंद्रीय भवन, सैक्टर 8, अलीगंज, लखनऊ–226024; **अहमदाबाद** अम्बिका काम्प्लैक्स, प्रथम तल, पालदी, अहमदाबाद– 380007; **गुवाहाटी** हाउस नं. 07, चेनीकुथी , न्यू कालोनी, के. के.बी. रोड, गुवाहाटी – 781003.

Peace

गांधी जयंती पर अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस मनायें - 2 अक्तूबर, 2007

दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम – स्वप्न करें साकार

सूचप्रचार निदेशालय

DIP/1187/07-08

KH-11/07/03

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : प्रभारी संपादक : कैलाश चन्द मीना